पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष : 33 मई 2023 अंक : 05

प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष 33 | मई 2023 | अंक 05

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

सुगंधित धान उत्पादन तकनीक — 01
सियाराम एवं जय प्रकाश

खरीफ प्याज की उत्पादन तकनीक — 04
एस.के. वर्मा एवं जगवीर सिंह

स्री पद्धति (एस.आर.आई.) से धान की खेती एवं उसके लाभ — 06
शशांक शेखर एवं जे. पी. सिंह

आर्थिक समृद्धि का द्वार भिण्डी की खेती — 08
बी0पी0शाही

बीज उपचार क्यों और कैसे — 12
सुनील कुमार एवं वी.पी. शाही

ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई के लाभ — 14
संदीप कुमार पाण्डेय एवं प्रमोद कुमार मिश्र

टिशू कल्चर केला (ग्रैंडनैन) की उत्पादन तकनीक — 16
एस. पी. सिंह एवं एस. के. सिंह

लेजर लैंड लेवलिंग खेत को बनाएं समतल, पानी–खाद और ईंधन की करें बचत — 20
देवेश कुमार एवं अरविंद कुमार सिंह

कद्दूवर्गीय सब्जियों में प्रभावशाली कीट और रोग प्रबंधन — 22
प्रदीप कुमार एंव प्रदीप कुमार मिश्रा

मौसमी फल आम के प्रसंस्करण विधियाँ एवं पौष्टिक महत्व — 24
कंचन एवं एस. के. तोमर

पशुओं के लिए संतुलित आहार की उपयोगिता — 27
सुरेन्द्र सिंह एवं आर. के. आनन्द

मई माह में किसान भाई क्या करें — 30

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के — 31

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये — 26

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. डी.के. श्रीवास्तव	05498–258201	9839403891
3	बलिया	डॉ. सोमेन्दु नाथ प्रभारी	–	8948044062
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	05278–254522	9415188020
5.	मऊ	डॉ. एल. सी. वर्मा	0547–2536240	7376163318
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. विनायक शाही	05252–236650	8755011086
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. के. एम. सिंह	–	9307015439
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. पी.के. मिश्रा प्रभारी	–	9936645112
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. विनय कुमार	–	–
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. ए. पी. राव.	9415720376	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. नितेन्द्र प्रकाश	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. सिंह	8787289358	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

खरीफ की मुख्य फसल धान है। उत्तर प्रदेश में धान की खेती व्यापक रूप से की जाती है परनतु इस क्षेत्र में प्रति इकाई उत्पादन बढ़ोत्तरी के लिये अभी भी अपार सम्भावनायें हैं। खेती के इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए पूर्वांचल खेती पत्रिका के इस अंक में धान उत्पादन की तकनीकियों पर विशेष रूप से लेख प्रकाशित किये जा रहे हैं। खेती के साथ बागवानी, सब्जी उत्पादन पर आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकी का ज्ञान तथा अपने प्रक्षेत्र पर किसान भाई उसका उपयोग करके अपनी सकल वार्षिक आय में आशातीत वृद्धि कर सकते हैं।

आशा है पत्रिका का यह अंक किसान भाईयों व प्रसार कार्यकर्ताओं के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

(ए.पी. राव)

सुगंधित धान उत्पादन तकनीक

सियाराम* एवं जय प्रकाश**

धान भारत की प्रमुख एवं अग्रणी खाद्यान्न फसल है। देश की आधे से अधिक आबादी के लिए धान न केवल जीवन का पोषक तत्व है बल्कि पौष्टिकता का मुख्य आधार भी है। हमारे देश में धान की औसत उत्पादकता 29.3 कु0/हे0 है जबकि कई अन्य देशों में इसकी औसत अपज 60 कु0/हे0 तक है। मजदूरों की समय पर अनुपलबधता खेती के निवेशों के बढ़ते हुए दाम, उत्पाद का उचित मूल्य न मिलना आदि कारणों से धान की खेती का उत्पादन लागत बढ़ गयी है, जिसके कारण किसान भाई सामान्य धान की फसल से भरपूर लाभ लेने में असफल रहते हैं ऐसी परिस्थिति में वे सुगंधित धान की खेती कर अच्छा लाभ कमा सकते है।

सुगंधित धान अपनी उच्च गुणवत्ता के कारण भारत में महत्व पूर्ण स्थान रखता है। आज सुगंधित धान अपने उत्कृष्ट पौष्टिक गुणों के कारण अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में बहुत लोक प्रिय है। सुगंधित धान विदेशी मुद्रा अर्जित करने का भी मुख्य स्रोत है। स्थानीय बाजारों में भी सुगंधित धान की मांग सामान्य धान की अपेक्षा अधिक रहती है। भारत अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में सुगंधित धान का मुख्य उत्पादक एवं अग्रणी निर्यातक है। सुगंधित धान का उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्यों में पंजाब हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और उत्तरांचल है। भारत में सुगंधित धान उत्पादन का भविष्य उज्जवल है जो कम क्षेत्र से अधिक मुनाफा बढ़ाने में सहायक होगा। अतः इसे किसानों में और अधिक लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है।

सुगंधित धान की उन्नतशील प्रजातियां:

आज भारत में सुगंधित धान की दर्जनों से ज्यादा उन्नत शील प्रजातियां किसानों के लिए उपलब्ध है। ये किस्में पौष्टिक, आकर्षित दानों वाली, लागत साधनों के प्रति संवेदी एवं मध्यम अवधि वाली है। वर्तमान में सुगंधित धान की अधिक उपज देने वाली कई किस्में विकसित की गई हैं।

पूसा बासमती–1, पूसा सुगन्ध–2, पूसा सुगन्ध–3, पूसा सुगन्ध–4 (पूसा बासमती 1121), पूसा सुगन्ध–5 (पूसा 2511) कस्तूरी–385 बासमती–370, तराबड़ी बासमती आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त क्षेत्र विशेष की मशहूर प्रजातियां, निजी कंपनियों की भी किस्में है जो विभिन्न क्षेत्रों में उगाई जा रही है।

सुगंधित धान का नर्सरी प्रबन्धन :–

सुगंधित धान नर्सरी के लिए जल्दी–जल्दी सिचाई की आवश्कता होती है अतः किसान भाइयों को नर्सरी ऐसे स्थान पर उगाना चाहिए जहां पानी की पर्याप्त सुविधा हो। एक हेक्टयर धान की रोपाई करने के लिए 600–800 वर्गमीटर नर्सरी पर्याप्त है। इसके लिए सुगंधित किस्मों के 22–24 किग्रा स्वस्थ बीज की आवश्यकता होती है। नर्सरी क्षेत्र में 1 हजार किलो0 ग्राम अच्छी सड़ी गोबर की खाद, 12.15 कि0ग्रा0 यूरिया 15.0 कि0ग्रा0 सिगंल सुपर फास्फेट व 15.0 कि0ग्रा0 म्यूरट आफ पोटाश को समान रुप से डालकर मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। बीज को बोने से पहले 3 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लीन–20 ग्राम कैप्टान 20 लीटर पानी में घोलकर 10 कि0ग्रा0 बीज की दर से 12 घण्टों के लिए पानी में भिगोना चाहिए इससे बीजों का अंकुरण अच्छा होता है तथा फसल सभी बीज जनित रोगों से सुरक्षित हो जाती है। नर्सरी में पानी लगाते समय इस बात का ध्यान रखें कि बीज बहुत देर तक पानी में न पड़ा रहे इससे बीजों के सड़ने का भय बना रहता है। नर्सरी में शुरु के समय पानी का स्तर बहुत ही कम रखना चाहिए जैसे–जैसे पौध बढ़ने लगे तथा पौधों में पत्तियां निकलने लगें वैसे–वैसे पानी का स्तर बढ़ाते रहना चाहिए। नर्सरी में खरपतवार नजर आयें तो उन्हें समय–समय पर निराई करके निकालते रहना चाहिए।

रोपाई का समय एवं विधि :–

पौध उखाड़ने से पहले नर्सरी में अच्छी तरह से पानी भर लेना चाहिए जिससे खेत की मिट्टी मुलायम व नम हो जाये ताकि पौधे उखाड़ने के समय पौधों की जड़ो को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचे। जब पौधे 25 दिन के हो जायें तो तुरन्त रोपाई कर देनी चाहिए। 30 दिनों से ज्यादा पुरानी पौध की रोपाई करने से उसमें किल्लों की संख्या कम हो जाती है जिसके फलस्वरुप उपज में भारी कमी आ जाती है। अतः

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (शस्य विज्ञान) एवं **विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि प्रसार), कृषि विज्ञान केन्द्र, पचपेड़वा, बलरामपुर

समय पर रोपाई करना बहुत आवश्यक है। रोपाई करते समय एक स्थान पर एक या दो पौधा लगाये सुगंधित धान की रोपाई हेतु पंक्तियों की 20 सेमी0 की दूरी पर तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी0 रखनी चाहिए रोपाई के समय खेत में 3–4 सेमी0 पानी भरा रहना चाहिए जिससे पौधों की रोपाई करने में सुविधा रहती है। अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु एक वर्ग मीटर में 45–50 पौधे लगाने चाहिए। पौधों की रोपाई पूरब–पश्चिम दिशाओं में करनी चाहिए जिससे सभी पौधों को पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश मिलता रहे। देर से रोपाई की दशा में एवं पौध अधिक पुरानी हो जाने पर पंक्ति से पंक्ति की दूरी घटाकर 15 सेमी0 कर देनी चाहिए। इसके अलावा एक स्थान पर कम से कम 2–3 पौधे लगाने चाहिए। रोपाई के 12–15 दिनों पर यदि किसी स्थान पर पौधे मर गये हो तो वहाँ पर नये पौधे लगा देने चाहिए।

खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग :–

जहाँ तक सम्भव हो खेत की एवं उर्वरकों की मात्रायें सुनिश्चित करनी चाहिए। सुगंधित धान के लिए नाइट्रोजन फास्फोरस, एवं पोटाश क्रमशः 120:60:60 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर की संस्तुति वैज्ञानिक द्वारा की गयी है। सुगंधित धान में नाइट्रोजन की मात्रा का एक तिहाई अर्थात 40 किग्रा0 नाइ्रोजन तथा फास्फोरस ओर पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई के समय खेत में समान रुप से डाल देनी चाहिए। नाइट्रोजन की उपरोक्त मात्रा में से 20 किग्रा0 डी0ए0पी0 व 20 किग्रा0 यूरिया के माध्यम से देना चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा में से 40 किग्रा0 रोपाई के 15–20 दिन बाद एवं 40 किग्रा0 मात्रा को 35–40 दिनों बाद खड़ी फसल में टापड्रेसिंग के रुप में डालना चाहिए। सुगंधित धान में नाइट्रोजन को सही समय पर देने से कल्ले जल्दी फूटते हैं जिसके परिणाम स्वरुप पेदावार में वृद्धि होती है। सुगंधित धान में पोटाश का प्रयोग बालियों की लम्बाई, बालियों में दानों की संख्या दानों की चमक व सुदृढ़ता एवं भार तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है।

सुगंधित धान की अच्छी गुणवत्ता, अधिक पैदावार एवं मृदा की उर्वरा शाक्ति में संतुलन बनाये रखने के लिए फसल में गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, मुर्गी खाद, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष प्रबन्ध और अन्य जैविक खादों का प्रयोग अति अवश्यक है। इससे पौधे को मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्व पर्याप्त एवं लम्बी अवधि तक मिलते रहते है। जैविक खादें रोपाई के 15–20 दिन पहले खेत तैयार करने के समय मिट्टी में अच्छी तरह मिला देनी चाहिए। जैविक खादों का मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। किसान भाई यदि इन खादों में से किसी एक जैविक खाद का प्रयोग करते है तो ऐसी दशा में नाइट्रोजन की 40 किग्रा0 मात्रा को कम कर देना चाहिए।

मिट्टी की जाँच के आधार पर यदि जिंक की कमी लगे या रोपाई से लेकर 30 दिन तक खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई पड़ने पर 25 किग्रा0 जिंक सल्फेट प्रति हे0 की दर से प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए 0.5 प्रतिशत जिंक का स्प्रे भी किया जा सकता है। घोल बनाने के लिए 5 किग्रा0 जिंक सल्फेट तथा 2.5 किग्रा0 अनबुझे चूने को 600–70 ली0 पानी में घोलकर प्रति हे0 की दर से खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई एवं जल प्रबन्धन :–

सुगंधित धान की खेती सामान्यत ऐसे क्षेत्रों में करना चाहिए जहाँ पर सिचांई जल का पूरा प्रबन्ध हो। अधिक पैदावार लेने के लिए धान की फसल के सभी क्रान्तिक अवस्थाओं जैसे कल्ले फूटना, फूल अना, एवं बालियों में दाना बनते समय पानी की कमी नही होनी चाहिए। रोपाई के समय खेत में 3–4 सेमी0 तक पानी खड़ा रहना चाहिए जिससे रोपाई किये गये पौधे आसानी से जड़ पकड़ लें। रोपाई के बाद जैसे–जैसे पोधे जड़ पकड़ने लगे और हरे–भरे होने लगे वैसे–वैसे पानी की मात्रा बढ़ाते रहना चाहिए परन्तु इस बात का ध्यान रखें कि खेत में 5 सेमी0 से अधिक पानी न खड़ा रहे। पौधो के फुटाव एवं बालियों के निकलने की अवस्थायें अति संवेदशील होती है क्यों कि इस समय पानी की कमी से पौधे सर्वाधिक प्रभावित होते है जिससे बालियों में दानों की संख्या एवं भारी कमी आ जाती है। धान की फसल में सिंचाईयों की संख्या मिट्टी के प्रकार, वर्षा जल की मात्रा एवं सिंचाई जल की मात्रा पर निर्भर करती है। यदि किसान भाई धान की फसल में अधिकतम जल उपयोग दक्षता बनाये रखना चाहते है तो रोपाई के 25 दिनों बाद तक मृदा में दरारें न पड़ने दें। यदि एक भी

क्र0सं0	खरपतवारनाशी	व्यवसायिक नाम	व्यवसायिक उत्पाद मात्रा प्रति (हे0)	प्रयोग समय एवं विधि
1.	ब्यूटा क्लोर 50 ई0सी0	मैचेटी, डेला क्लोर, कैपक्लोर पैराक्लोर	2.5–4 किग्रा0	रोपाई तुरन्त बाद या तीन दिन के अन्दर उचित नमी पर छिड़काव करें।
2.	एनीलोफास 30 ई0सी0	एरोजिन, एनीलोगार्ड	1.0.1.5 किग्रा0	रोपाई के 8–10 दिन पश्चात् छिड़काव कर
3.	विसपाइरी बैंक सोडियम साल्ट 10 एस0सी0	नामिनी मोल्ड ऐडारा	200–250 ग्रा0	रोपाई के 15–20 दिन पश्चात् छिड़वान करें
4.	मेटसल्फयूरानइथाइल+ क्लोरी म्यूरान इथाइल 20 डब्लू0पी0	आलमिक्स	20 ग्राम	रोपाई के 15–20 दिन पश्चात् छिड़वान करें

नोटः– उपर्युक्त दवा की आवश्यक मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे0 की दर से छिड़काव करें।

बार मृदा में दरारें बन गई तो दिये गये सिंचाई जल का अधिकांश भाग मृदा की निचली सतहों में रिसकर नष्ट हो जायेगा साथ ही ऐसी अवस्था में खेत में खरपतवारों के अधिक पाने की संभावना बढ़ जाती है। फसल की कटाई करने के 10–15 दिन पहले खेत से पानी निकाल देना चाहिए। ऐसा करने से दाने अच्छी तरह पक जाते है एवं फसल के गिरने की संम्भावना कम हो जाती है।

खरपतवार प्रबन्धन :–

सामान्यतः फसल की वृद्धि के साथ ही कई प्रकार के चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार उग आते है जिनमें से सांवक, मोथा, मकरा, जल भगरा, कोन्दरा, कनकौवा, दुद्री एवं हजार दाना नाम खरपतवार मुख्य रुप से रोपाई वाले पानी और पोषक तत्वों के अधिकांश भाग का अवशोषण कर लेते है जिसके फलस्वरुप धान के गुणवत्ता एवं पैदावार में भारी कमी आ जाती है। धान की फसल में रोपाई के 25 से 30 दिनों तक का समय फसल–खरपतवार स्पर्धा का सबसे क्रान्तिक काल माना जाता है। वर्तमान में कुछ ऐसे खरपतवार नाशी/शाकनाशी उपलब्ध है जिन का उचित मात्रा में सही समय पर सही तरीके से प्रयोग कर खरपतवारों पर आसानी से नियंत्रण पाया जा सकता है।

रोग एवं उसका निदान :–

धान की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग पौध गलन, तना गलन, भूरे धब्बों का रोग (ब्लास्ट) पत्ती का झुलासा रोग और पत्ती रेखा रोग है। धान में फफूँद एवं जीवाणु नाशक दवाओं से बीज का उपचार करना अत्यन्त आवश्यकता है जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। इस उपचार से पौध गलन, ब्लास्ट, जीवाणु पत्ती अंग–मारी इत्यादि रोगों के नियंत्रण में मदद मिलती है।

प्रमुख कीट एवं उनका नियंत्रण :–

(क) जड़ की सूड़ी :– इसके नियंत्रण के लिए फ्यूराडान 3 सी0 की 25 किग्रा0 मात्रा प्रति हे0 की दर से खड़े खेत में डालना चाहिए।

(ख) तना वेधक :– इस कीड़े की सूड़ी ही नुकसान पहुँचाती है इसके नियंत्रण के लिए कारटाप हाड्डो क्लोराइड 4 प्रतिशत दोनदार रसायन के 17–18 किग्रा0/हे0 की दर से प्रयोग विशेष लाभकारी पाया गया है।

(ग) धान का गंधी बग :– यह कीड़ा दूधिया दाने और पत्तियों का रस चूसता है फल स्वरुप दाने पूरी तरह से नही भर पाते इस कीट को छूने से बहुत ही तीखी गंध आती है। यदि फसल में अधिक प्रकोप हो तो मोनोक्रोटोफास 36 ई0सी0 की 800 ली0 दवा प्रति हे0 की दर से 500–700 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

फसल की कटाई :–

सुगंधित धान की अधिक उपज देने वाली किस्मों के सन्दर्भ में जब दानों में नमी की मात्रा 20–22 प्रतिशत रह जाए और 88 प्रतिशत बालियां तथा तने पीले पड़ पायें तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। ज्यादा देर से कटाई करने पर फसल के गिरने, बालियों से दाना झड़ने एवं चावल के टूटने की सम्भावना अधिक हो जाती है।

इस तरह यदि किसान भाई यदि उपरोक्त लिखित बातों को ध्यान में रखकर सुगंधित धान की वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी को अपनाते है तो उनको लगभग 55–60 कुन्तल/हे0 धान की पैदावार प्राप्त हो सकती है।

खरीफ प्याज की उत्पादन तकनीक

एस.के. वर्मा* एवं जगवीर सिंह**

वैज्ञानिक विधियां अपनाकर किसान भाई खरीफ मौसम यानी बरसात में भी प्याज का उत्पादन कर अपनी आय बढ़ा सकते हैं, चूंकि प्याज की मांग पूरे वर्ष भर बनी रहती है। जायद में उत्पादित प्याज बरसात में उचित भण्डारण न होने के कारण उसकी गुणवत्ता बरसात के बाद खराब हो जाती है तथा माह सितम्बर–अक्टूबर के बाद बाजार भाव कम हो जाता है, इसके विपरीत खरीफ प्याज की मांग बाजार में बढ़ जाती है तथा किसान को उचित मूल्य प्राप्त होता है। सामान्यतः प्याज का उपयोग हम सलाद, अचार, सब्जियों को बनाने एवं मसाले के रूप में प्रयोग करते हैं साथ ही प्याज अनेक प्रकार के विटामिन, खनिज लवण एवं वसा होने के कारण औषधीय गुणों से भरपूर होता है।

भूमिः

बरसात में प्याज की खेती के लिए ऐसी भूमि का चयन करना चाहिए जिसमें कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा हो तथा मिट्टी बलुई दोमट होने के साथ साथ उचित जल निकास की व्यवस्था हो तथा मृदा पी.एच.–7.5 से अधिक न हो।

प्रजातिः

निफांड–53

कंद हल्के बैंगनी रंग के जो बाद में लाल रंग के हो जाते हैं। यह किस्म रोपाई के 120–130 दिन में खुदाई योग्य तैयार हो जाती है। उत्पादन 150–200 कु0 प्रति हेक्टेयर है।

एग्रीफाउन्ड डार्करेड

यह किस्म 130–140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। कन्द गहरे लाल होते हैं। औसत पैदावार 200–250 कु0 प्रति हेक्टेयर है।

भीमारेड

आकार औसत, रंग चमकीला लाल एवं औसत चरपराहट। उत्पादन 250 से 300 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

बुवाई का समय

बीज की बुवाई नर्सरी में 1 से 15 जून तक अवश्य कर लेनी चाहिए अन्यथा भारी बारिश शुरु होने पर बुवाई में विलम्ब हो सकता है तथा उत्पादन पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

बीज की मात्रा

एक हेक्टेयर की रोपाई के लिए 8 से 10 किलोग्राम बीज पर्याप्त रहता है।

पौध तैयार करनाः

बीज को ऊंची उठी हुई क्यारियों में बोया जाता है। क्यारियों की चौड़ाई 60 से 70 सेमी तथा लम्बाई सुविधानुसार रखते हैं। यद्यपि 3 मीटर लम्बी क्यारियां सुविधाजनक होती है। एक हेक्टेयर रोपाई के लिए लगभग 80 से 100 क्यारियां (3x1मीटर) पर्याप्त होती है। यदि रोग लगने की सम्भावना हो तो बीज तथा पौधशाला की मिट्टी को कवकनाशी जैसे थीरम या कैप्टान आदि से उपचारित करना चाहिए। 2–3 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज के लिए पर्याप्त होती है परन्तु भूमि उपचारित करने के लिए 4–5 ग्राम दवा की प्रति वर्ग मीटर भूमि के लिए आवश्यकता होती है। बीज को 5–7 सेमी की दूरी पर कतारों में बोना चाहिए। बीज को बुवाई के बाद आधा सेमी तक सड़ी तथा छनी हुई गोबर की खाद और मिट्टी से पूर्णतया ढक देते है।

इसके बाद फव्वारे से हल्की सिंचाई कर देते हैं। फिर बीज को सूखी घास से ढक देते हैं। जब बीज अच्छी तरह अंकुरित हो जाए तो घास हटाकर क्यारियों में हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। पौध 6–7 सप्ताह में तैयार हो जाती है। शुरु में 2–3 सप्ताह तक पौध की सिंचाई फौब्बारे से करते हैं। फिर बाद में आवश्यकता हो तो नालियों के माध्यम से सिंचाई करते हैं। पौध को अधिक बरसात से बचाने के लिए घासफूस की छपपर

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, **विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र, बलरामपुर

से ढकना चाहिए जैसे ही बरसात खत्म हो उसे हटा देना चाहिए, क्योंकि यह देखा गया है कि अगर ढकना हटाया नहीं जाता तो फ्यूजेरियम का आक्रमण अधिक तापक्रम एवं नमी होने से अधिक होता है कभी–कभी तो 75 प्रतिशत पौध मरते देखे गए हैं।

पौध की रोपाई के लिए खेत की तैयारी

दो तीन जुताईयां करके खेत को अच्छी तरह समतल बनाकर क्यारियों एवं नालियों में बांट देते हैं फिर 50 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर के हिसाब से क्यारियों में अच्छी तरह मिला देते हैं। रोपाई के दो दिन पूर्व 200 किग्रा कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट या 200 किग्रा यूरिया और 300 किग्रा सिंगल सुपर–फास्टफेट तथा 100 किग्रा पोटेशियम सल्फेट या म्यूरेट आफ पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाकर फिर समतल बना देते हैं।

पौध की रोपाई

पौध को अगस्त के प्रथम पक्ष के बीच लगाते हैं। रोपाई करते समय कतार से कतार की दूरी 20 सेमी तथा पौध से पौध 10 सेमी रखते हैं। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करना अत्यंत आवश्यक होता है नहीं तो 100 प्रतिशत हानि हो सकती है।

फसल की देखभाल

प्याज के पौधों की जड़ें अपेक्षाकृत कम गहराई तक जाती है। अतः अधिक गहराई तक गुड़ाई करनी चाहिए। अच्छी फसल के लिए 2–3 बार शुरु में खरपतवार निकालना आवश्यक होता है। खरपतवार नाशक दवा का भी प्रयोग किया जा सकता है। वैसालिन या स्टाम्प दवा 1 लीटर 800 लीटर पानी में मिलाकर खेत में रोपाई के समय छिड़काव करते हैं। खरपतवार नाशक दवा डालने के 40–50 दिनों बाद एक बार खरपतवार निकालना आवश्यक होता है। वैसे अगस्त से अक्टूबर के बीच में सिंचाई लगभग 8–10 दिनों के अन्तर पर बरसात न होने पर कर सकते हैं। यदि जमीन ज्यादा रेतीली है तो सिंचाई हर तीसरे दिन करते हैं। जिस समय गांठे बढ़ रही हों तो इस समय सिंचाई जल्दी–जल्दी करते हैं। पानी की कमी से गांठे अच्छी तरह से नहीं बढ़ पाती और इस तरह से पैदावार में कमी हो जाती है।

खड़ी फसल में खाद देना

रोपाई के चार सप्ताह बाद 100 किग्रा यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में छिड़काव विधि से मिला देते हैं। यूरिया डालने से पहले खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक होता है। यदि जमीन हल्की किस्म की है तो उपरोक्त खाद की मात्रा दो भागों में रोपाई के 20 और 45 दिनों के अन्तर पर देना चाहिए।

कीट एवं रोग नियंत्रण

फसल को थ्रिप्स नामक कीड़े से बचाने के लिए मैलाथियान एक मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। पर्पल ब्लाच बैंगनी धब्बा तथा स्टेमफीलियम झुलसा रोग में बचाव के लिए डायथेन एम–45 नामक दवा 2 से 2.50 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर 10–15 दिनों के अन्तर पर छिड़काव करें। छिड़कने वाले घोल में चिपकने वाली दवा जैसे ट्राटोन या सैन्डोविट नामक दवा अवश्य मिलायें।

खुदाई एवं प्याज का सुखाना

फसल को तैयार होने में लगभग 5 माह लग जाते हैं क्योंकि गांठें नवम्बर –दिसम्बर में तैयार होती हैं। जिस समय तापमान काफी कम होता है पौधे पूरी तरह से सूख नहीं पाते। इसलिए जैसे ही गांठें अपने पूरे आकार की हो जाएं एवं उनका रंग लाल हो जाए तो उन्हें पैरों से गिरा देना चाहिए और करीब 10 दिन खुदाई से पहले सिंचाई बन्द कर देना चाहिए। इससे गांठें अच्छी आकार की होने पर भी खुदाई नहीं की जाती तो वे फटना शुरु कर देती है। खुदाई करके इनकों कतारों मे रखकर खेत में सुखा देते हैं। पत्तों को गर्दन से 2.5 सेमी ऊपर से अलग कर देते हैं और फिर एक सप्ताह तक सुखा लेते हैं। सुखाते समय सड़े एवं कटे हुए दो गांठों वाली एवं अन्य खराब किस्म की गांठें निकाल देते हैं।

उपज

200–250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर औसत उपज हो जाती है।

स्री पद्धति (एस.आर.आई.) से धान की खेती एवं उसके लाभ

शशांक शेखर* एवं जे. पी. सिंह**

धान (ओरिजा सैटिवा) दुनिया की आधी से अधिक आबादी का एक प्रमुख फसल है। लगभग 700 मिलियन टन सालाना उत्पादन के साथ ही वैश्विक स्तर पर इसकी खेती 158 मिलियन हेक्टेयर में की जाती है। शोध से पता चला है कि भारत में लगभग 113 मिलियन टन वार्षिक चावल उत्पादन होता है, जो इसकी उत्पादकता वृद्धि दर की तुलना में लगभग तीन गुना कम है। और यह भी अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2030 और 2050 में चावल की मांग को पूरा करने लिए लगभग 40 और 70 प्रतिशत चावल उत्पादकता को बढ़ाने की आवश्यकता है। आमतौर पर, किसान धान की खेती निरंतर बाढ़ सिंचाई विधि (अधिकांशतः धान की वृद्धि अवधि में लगभग 5 से 20 सेमी. स्थिर जल भराव की स्थिति बनाये रखते है) के माध्यम से करते हैं। धान की फसल अवधि में लगभग 50 से 300 सेमी. सतही जल भराव की आवश्यकता होती है। इसमें से लगभग 20 से 50 प्रतिशत जल धान की खेती के लिए जरुरी है और बाकी लगभग 50 से 80 प्रतिशत जल अपवाह, गहरा अंतःस्रवण द्वारा भूमिगत जल में एवं वाष्पोत्सर्जन के रूप में वायुमंडल में मिल जाता है। यह अनुमान है कि एक टन चावल के उत्पादन के लिए 2.5 मिलियन लीटर पानी और 15–20 किलोग्राम, 5–11 किलोग्राम और 15–30 किलोग्राम नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम की आवश्यकता होती है। भूजल और उपजाऊ भूमि की कमी के कारण धान की खेती को करना एक बड़ी चुनौती बन गई है, विशेषकर जब धान की मांग बढ़ रही है। इसलिए निरंतर बाढ़ सिंचाई विधि को सिंचाई जल संचयन की विधियों जैसे; सिस्टम आफ राइस इन्टेन्सिफिकेशन (स्री– एस. आर. आई.), बंड प्लगिंग, एरोबिक राइस सिस्टम और अल्टरनेट वेटिंग एंड ड्राइंग के साथ प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता है।

स्री पद्धति एक ऐसी वैज्ञानिक विधि है, जिससे धान की पैदावार कम लागत में 2–3 गुना बढ़ाया जा सकता है। इस पद्धति को फ्रांसीसी पादरी फादर हेनरी डे लाउलानी द्वारा 1980 के दशक की शुरुआत में मेडागास्कर में विकसित किया गया था। इसको धान उत्पादन की मेडागास्कर विधि भी कहते हैं, इसके द्वारा पानी के बहुत कम प्रयोग से भी धान का बहुत अच्छा उत्पादन किया जा सकता है। जहां परम्परागत तकनीक में धान की खेती निरंतर बाढ़ सिंचाई विधि (5–20 सेमी) के माध्यम से करते है वही स्री पद्धति विधा में धान की खेत में हमेशा निरंतर जल बनाए रखने की आवश्यकता नहीं होती है, खेत में हमेशा नमी बरक़रार रखने की आवश्यकता होती है। सामान्यतः जमीन पर दरारें उभरने पर ही दोबारा सिंचाई करनी होती है इस पद्धति से धान के खेत में जहां, भूमि, श्रम और पानी कम लगता है, वही उत्पादन लगभग 2–3 गुना ज्यादा मिलता है। इस पद्धति में प्रचलित किस्मों का प्रयोग कर उत्पादन किया जा सकता है।

स्री पद्धति के मूल मंत्र

- देशी गोबर, जैविक एवं हरि खाद द्वारा पोषक तत्त्व प्रबंधन
- 10–12 दिन पूरानी पौध की रोपाई
- एक पौध (मिट्टी एवं बीज चोल सहित)
- अपेक्षाकृत अधिक दूरी पर रोपाई
- यांत्रिक विधि द्वारा निराई–गुड़ाई
- सिंचाई प्रबंधन

स्री पद्धति की तकनीकी

1. उपयुक्त मिट्टी का चुनाव

लवणीय या अम्लीय मिट्टी स्री पद्धति के लिए अनुकूल नहीं है। जब बाढ़ जैसी स्थिति में लवणीय मिट्टी में धान की खेती की जाती है, तब नमक भूमि की सतह पर जमा हो जाता है, जो धान के पौध एवं उपज को प्रभावित करता है। वहीं स्री पद्धति में मिट्टी को बीच–बीच में सुखाया जाता है जिससे भूमि की सतह पर नमक जमा नहीं हो पाता है जिससे धान की पौध का विकास अच्छा होता है और ज्यादा उपज प्राप्त की जा सकती है।

2. भूमि को समतल करना

स्री पद्धति के लिए चयनित भूमि एक समान होना

---

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि अभियंत्रिकी), **विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केंद्र, आकुंशपुर गाजीपुर, आचार्य नरेंद्र देव कृषि व प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय,कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश, भारत

चाहिए, जब भूमि की सिंचाई की जाती है तब पानी पूरे खेत में एक समान पहुंच जाना चाहिए। और जब जरुरत पड़े तब ज्यादा पानी को निकाला जा सके।

3. नर्सरी बेड

नर्सरी बेड की चौड़ाई 1 मीटर तथा लम्बाई अपनी सुविधानुसार रखनी चाहिए। नर्सरी हेतु 5–6 इंच उठी हुई एक मीटर चौड़ाई की बेड आदर्श मानी जाती है।10–12 दिन की अवधि वाली पौध की जड़ें 3–4 इंच लम्बी बढ़ती है। अतः 5–6 इंच उठी हुई बेड से पौधों की जड़ों को बिना नुकसान पहुंचाये आसानी से निकाला जा सकता है। गोबर की सड़ीखाद सात भाग तथा खेत की मिट्टी तीन भाग, अगर खेत की मिट्टी भारी हो तो गोबर की खाद सात भाग खेत की मिट्टी दो भाग तथा सफ़ेद बालू एक भाग का मिश्रण तैयार कर लेते हैं। तैयार मिश्रण को उठी हुई पूर्व में बनी क्यारियों/बेड पर 2.5 इंच मोटी परत बिछा देते हैं, अब यह बेड बीज की बुआई हेतु तैयार है। गोबर की खाद में जड़ों का विकासअधिक होता है। पौध स्वस्थ एवं रोगरहित रहती है तथा पौधों को बेडसे आसानीपूर्वक निकाल सकते हैं। बेड से मृदा कटाव रोकने के लिये चारों किनारों पर पुवाल की रस्सियों या लकड़ी के तख्तों का प्रयोग कर सकते हैं। जल निकास हेतु किनारों पर नालियां बनानी चाहिये। बीज के छिड़काव से पहले नर्सरी बेड को सुविधानुसार चार बराबर भागों में बांट देना चाहिए, जिससे नर्सरी बेड में लगे पौध को अच्छे से देखभाल किया जा सके।

नर्सरी को मैट विधि (चटाईदार) से भी तैयार कर सकते हैं। इस विधि में पॉलीथीन अथवा खाद की खाली बोरियों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिये 1 गुणा 0.5 मीटर आकार की लकड़ी या फ्रेम उपयोग में लेते हैं। इस फ्रेम को चार बराबर भागो में बांटकर 2.5 इंच मोटी पूर्व में बनी मिश्रण कीपरत बिछा देते हैं। इन बेड में बीज छिटककर मिश्रण द्वारा ढकदेते हैं। बुवाई के बाद फव्वारे से सिंचाई करके फ्रेम को दूसरी जगह प्रयोग करने के लिये हटा देते हैं। नमी बनाये रखने के लिये फव्वारे से या बेड के मध्य नालियां बनाकर सिंचाई करते हैं।इस विधि में एक हेक्टेयर क्षेत्रफल की रोपाई के लिये 100 वर्गमीटर नर्सरी क्षेत्र की आवश्यकता होती है।

4. बुवाई

स्री पद्धति में पौध से पौध और पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी ज्यादा होती है और एक जगह पर एक ही पौध लगाते हैं। इसलिए इस पद्धति में एक एकड़ में रोपाई करने के लिए 2 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बीज का छिड़काव करने से पहले बीज को अच्छे से छटाई एवं उपचार कर लेना चाहिए। सबसे पहले एक बाल्टी पानी में एक मुट्ठी नमक मिलाने के बाद बीज को बाल्टी में डाल दें और जो बीज ऊपर तैरने लगे उन्हें निकाल दें क्योंकि वह बीज ख़राब होते हैं तथा बचे हुए बीज को साफ़ पानी से अच्छे से साफ़ करके उन्हें उपचार करने वाले रसायनों (थीरम और कार्बेन्डाजिम) से उपचारित कर लें। और फिर उन्हें जूट के बैग में नमी युक्त स्थान पर रात भर अंकुरण के लिए रखें। इस पद्धति में पौध से पौध और पंक्ति से पंक्ति की बीच की दूरी ज्यादा होने से पौधों को अधिक से अधिक हवा और सूर्य का प्रकाश मिलता है इसके परिणाम स्वरूप प्रत्येक पौध ज्यादा कल्ले देता है, जिससे जड़ें स्वस्थ और अधिक गहराई तक जाती हैं। जिससे पौध ज्यादा पोषक तत्वों को ग्रहण कर सकता है। पौध जितना स्वस्थ होगा कल्लों की संख्या, बालियों की संख्या, बालियों की लम्बाई अधिक होगी फलस्वरूप ऊपज भी ज्यादा होगी।

5 . विकसित पौध का रोपण

पौधरोपण तब शुरू किया जाना चाहिए जब पौध में दो पत्ते आ जाये। तभी पौध स्वस्थ होगा और कल्लों की संख्या, बालियों की संख्या, बालियों की लम्बाई अधिक होगी फलस्वरूप ऊपज भी ज्यादा होगी। रोपाई से पहले हरी खाद वाले खेत को अच्छे से जोताई कर हरी खाद को सड़ने दें। उसके बाद खेत की अच्छे से पड्डल (लेव) करके बेसल डोज़ नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम को मिटटी में मिला करके मिला करके लगभग 8 से 12 दिन की पुरानी नर्सरी की रोपाई करें। रोपाई करते समय खेत में 1–2 सेमी स्थिर जल भराव या कीचड़ होना चाहिए। इस पद्धति में पौध से पौध और पंक्ति से पंक्ति की बीच की दूरी लगभग 25 से 30 सेमी होनी चाहिए। जिससे पौधों को अधिक से अधिक हवा और सूर्य का प्रकाश मिलता है इसके परिणाम स्वरूप प्रत्येक पौध ज्यादा कल्ले देता है,

(शेष पृष्ठ 11 पर)

आर्थिक समृद्धि का द्वार भिण्डी की खेती

बी0पी0शाही

भिण्डी भारत की एक लोकप्रिय सब्जी है जो देश के लगभग सभी भागों में उगायी जाती है। भिण्डी कच्चे हरे फल के लिए नहीं बल्कि इसकी जड़ और तना, गुड़ और शक्कर साफ करने में भी प्रयोग किया जाता है। भिण्डी में मुख्यरुप से कार्बोहाइडेट, कैल्शियम, फास्फोरस के अतिरिक्त विटामिन बी0 एवं सी0 पायी जाती है, भिण्डी के फल में आयोडीन की मात्रा अधिक पायी जाती है। ताजी भिण्डी की निर्यात की काफी सम्भावनाऐं है।

उन्नतशील किस्में

वी0आर0ओ0–6– यह प्रजाति पीत शिरा मोजैक एवं प्रारम्भिक पत्ती मरोण विषाणु रोग से अवरोधी है। इससे फूल 38 से 40 दिनों में चौथे से पाचवे गाँगड़ पर आ जाता है। इसकी पैदावार गर्मी के दिनों में 135 कुन्तल तथा बरसात की फसल में 180 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक होती है।

काशी चमन– यह प्रजाति एलोवेन मुजोक विषाणु रोगरोधी है। यह बुवाई के 40–50 दिनों बाद तोड़ाई योग्य हो जाती है। इसके फल गहरे हरे तथा 11–14 सेन्टीमीटर लम्बी होती है। इसकी औसत पैदावार 150–160 कुन्तल प्रति हे0 होती है।

काशी लालिमा– यह किस्म पित्त शिरा मौजेक के प्रति सहिष्णु है इसके फल लाल रंग के होते है लाल भिण्डी में मौजूद, आयरन, कैल्शियम, एण्टीआक्सीडेन्ट तत्व कुल मिलाकर यह औषधीय गुणो से भरपूर है, इसकी औसत पैदावार 140 से 150 कुन्तल प्रति हे0 होती है।

वी0आर0ओ0–5– यह भिण्डी की बौनी प्रजाति है। इसकी बढ़वार 60 से 70 से0मी0 तक सीमित है। इसमें गाँगड़े कम दूरी पर आती है। जिससें यह किस्म बौनी होती है। एवं अच्छी उपज देती है। इसकी पैदावार बरसात की फसल में 150 कुन्तल व गर्मी में 120 कु0/हे0 तक होती है। यह किस्म भी पीत शिरा मोजैक व प्रारम्भिक पत्ती मरोण विषाणु रोग से मुक्त है।

परभनी क्रान्ति– यह किस्म पीत सिरा मोजैक विषाणु के प्रति सहिष्णु है यह बुआई के 50–55 दिनों में तुड़ाई योग्य हो जाती है। फलियाँ पांच धारियों वाली, मुलायम, चिकनी, 12–14 से0मी0 लम्बी होती है। इसकी पैदावार 85–90 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है।

आई0आई0वी0आर0–10– यह भिण्डी की सात धारी किस्म है। पौधो में फूल बोने के 42 दिन बाद में आ जाते है। यह प्रजाति भी पीत सिरा मोजेक व प्रारिम्भक पत्ती मरोण विषाणु से अवरोधी है। इसकी पैदावार बरसात के दिनों में लगभग 150 कु0 प्रति हे0 होता है।

वर्षा उपहार:– यह प्रजाति येलो वेन मोजेक विषाणु रोग रोधी हैं पौध मध्यम ऊंचाई वाले (90–120 से0मी0) तथा इनके इन्टर नोड पास–पास होते हैं। पौधों में 2–3 शाखायें प्रत्येक नोड से निकलती है। इसकी औसत पैदावार 90–100 कु0/हे0 होती हैं।

पूसा ए–4 :– यह प्रजाति येलो वेन मौजेक विषाणु रोग रोधी है। यह एफिड तथा जैसिड के प्रति सहनशील है। इसके फल गहरे हरे तथा 12–15 से0मी0 लम्बे होते है। पहली तुड़ाई 45 दिनों बाद शुरू हो जाती है। औसत पैदावार 12–15 टन प्रति हैक्टयर होती है। यह प्रजाति वर्षा तथा गर्मियों दोनों समय में उगाई जाती है।

अर्का अनामिका:– यह प्रजाति येलो वेन मोजेक विषाणु रोग रोधी है। इसके पौधें ऊँचे (120–150 सेमी0) सीधे तथा अच्छी शाखा युक्त होते हैं। फल 20 सेमी लम्बे तथा मध्यम आकार के होते है।

अर्का अभय:– यह प्रजाति येलो वेन मोजक विषाणु रोग रोधी है। इसके पौधे ऊँचे 120–150 से0मी0 सीधे तथा अच्छी शाखा युक्त होते है।

हिसार उन्नत:– पौधे मध्यम ऊँचाई 90–120 सेमी0 वाले तथा इन्टर नोड पासपास होते है। पौधे में 3–4 शाखायें प्रत्येक नोड से निकलती है। पत्तियों का रंग रहा होता है। पहली तुड़ाई 46–47 दिनों बाद शुरू हो जाती है।

जलवायु– भिण्डी के लिए लम्बे गर्म मौसम की आवश्यकता पड़ती हैं इसकी खेती के लिए औसत तापक्रम 25 से 30° सेन्टीग्रेट उपयुक्त पाया गया है। भिण्डी की बुवाई औसतन 20 डिग्री सेन्टीग्रेट से

वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, नॉनपारा बहराइच–2

अधिक तापमान होने पर करनी चाहिए।

खेत की तैयारीः–

इसकी खेती जीवांश युक्त गहरी दोमट या बलुई दोमट मिटटी में सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसकी अच्छी खेती के लिए 6 से 7 पी0एच0 मान वाली मिटटी सर्वोत्तम पायी गयी है। यदि खेत में नमी की कमी हो तो पलेवा कर खेत की 3–4 जुताईयां करके पाटा लगा देना चाहिए।

बुआई का समय

बरसात की फसल जून–जुलाई और ग्रीष्म ऋतु की फसल की बुआई फरवरी मार्च में करते हैं। उत्तर भारत में व्यवसायिक दृष्टि से अगेती फसल का काफी महत्व है। बहुत अगेती फसल की बुवाई का समय फरवरी माह का प्रथम सप्ताह है। अगेती फसल आकस्मिक मौसम पर भी निर्भर करता है। औसत तापक्रम 18^0 सेन्टीग्रेट से कम होने पर जमने के बाद या तो बीज सड़ जाता है या बढ़वार रूक जाती है। यद्यपि इसकी बुवाई 15 फरवरी से जुलाई तक सिंचाई की सुविधा होने पर किसी भी समय कर सकते है।

बीज की मात्रा

बीज की मात्रा बोने के समय व दूरी पर निर्भर करती हैं। खरीफ की खेती के लिए 8–10 किग्रा तथा ग्रीष्मकालीन फसल के लिए 12–15 किग्रा बीज की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। अगेती फसल, फरवरी के प्रथम सप्ताह में लगाने पर 15–20 किग्रा प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता पड़ती है।

दूरीः– ग्रीष्मकालीन फसल के लिए लाईन से लाईन 30सेमी व पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी, वर्षाकालीन फसल के लिए लाईन से लाईन की दूरी 60 सेमी व पौधे से पौधे की दूरी 30 सेमी0 रखनी चाहिए।

बुवाईः–

भिण्डी की बुआई समतल क्यारियों एवं मेड़ों पर करते हैं। जहाँ मिटटी भारी तथा जल निकास का अभाव हो वहाँ बुआई मेड़ों पर करते हैं। गर्मी के दिनों में अगेती फसल लेने के लिए बीज को 24 घण्टे तक पानी में भिगो कर एवं छाया में थोड़ी देर सुखा कर बुआई करनी चाहिए। बुआई के पूर्व कैप्टान या थिरम नामक कवकनाशी दवा से (2.5–3 ग्राम दवा / किग्रा बीज) से उपचारित कर लेना चाहिए। बीज की बुआई 2.5 से 3.0 से0मी0 की गहराई पर करते हैं।

खाद एवं उर्वरक

भिण्डी की अच्छी पैदवार के लिए भूमि में 20–25 टन सड़ी गोबर की खाद, 100 कि0ग्रा नाइट्रोजन, 50 किग्रा फास्फोरस और 50 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय अच्छी प्रकार मिटटी में मिला लें। नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा तथा फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के पूर्व मिटटी में मिला लेना चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा बुआई के 30 से 50 दिन के बाद फसल में टापड्रेसिंग के रूप में दें। जब फसल बुआई के 40–50 दिन बाद जल विलेय ऊर्वरक एन0पी0के0 18:18:18 का वर्णीय छिड़काव एक किग्रा 150 लीटर पानी घोल बनाकर एक एकड़ में छिड़काव करें।

सिंचाई

यदि भूमि में अंकुरण के समय पर्याप्त नमी न हो तो बुआई पलेवा देकर करना चाहिए। अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। सिंचाई मार्च में 10–12 दिन, अप्रैल में 7–8 दिन और मई जून में 4–5 दिन के अन्तर पर करें। बरसात में यदि वर्षा होती रहती है तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। वर्षा ऋतु में भिण्डी की फसल में पानी के निकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

अंतः सस्य क्रियायेंः–

भिण्डी की पौधे को विकास एवम् बढ़वार पर खरपतवार प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। खरपतवार के नियन्त्रण के लिये ड्युअल (मेटोलेक्लोर–50 ई0सी0) की 2 लीटर मात्रा या स्टाम्प (पेन्डिमेथलीन 30 ई0सी0) की 3.3 लीटर दवा 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के 24 घंटे के अन्दर छिड़काव करने से खरपतवार नष्ट हो जाते है तथा पैदावार अच्छी प्राप्त होती है। तत्पश्चात् आवश्यकतानुसार निराई गुणाई करते रहना चाहिए।

फलों की तुड़ाई और उपज–

भिण्डी की फलों की तुड़ाई नरम अवस्था में करनी चाहिए क्योंकि कड़ा होने पर उसमें रेशें की मात्रा बढ़ जाती है। फलों की तुड़ाई फूल खिलने के 4 से 6 दिन बाद की जाती है। उचित देख रेख, उन्नतशील किस्म, खाद और उर्वरकों के उचित प्रयोग से प्रति हेकटेयर गर्मी के दिनों में 80–100 तथा बरसात में 120–150 कुन्तल उपज प्राप्त कर सकते हैं। निर्यात के लिए फली 6–8 सेमी लम्बी व सीधी और फूल आने (परागण) के चौथे दिन ही तुड़ाई कर देनी चाहिए।

आर्थिक विश्लेषणंः—

इस प्रकार खेती करके कृषक बन्धु भिण्डी की खेती में 58 हजार लागत तथा शुद्ध लाभ 95 से लेकर 1.25 लाख आमदनी प्राप्त कर सकते है।

प्रमुख कीटः—

सूड़ियाँ फलों में छेद करती है। जिससे प्रभावित फल सब्जी योग्य नहीं रहते है व ग्रसित फल सही आकार नहीं ले पाता है और टेढ़ा हो जाता है। इसकी सुड़िया तने के शीर्ष भाग को नुकसान करती है, शीर्ष मुरझा जाता है। जिससे पौधे की बढ़वार रूक जाते हैं। इसके नियन्त्रण के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये जाते हैं। 4 प्रतिशत नीम की गिरी व 1 मिली0 इण्डोसल्फान प्रति ली0 पानी के साथ मिलाकर फूल लगते समय छिड़काव करना चाहिए। अण्डा परजीवी ट्राइकोग्रामा 50,000 को फल लगते समय साप्ताहिक अन्तराल पर खेत में छोड़ने से फल वेधक कीट का प्रकोप कम पाया जाता है। साइपरमेथ्ररीन 10 ई0सी0 का 0.5 मि0ली0 प्रति ली0 पानी में घोल बनाकर छिड़काव करने से इस कीट का नियन्त्रण सम्भव है।

सावधानियाँ— रासायनिक दवाओं के उपयोग के साथ अण्डा परजीवों कीटों को खेत में नहीं छोड़ा चाहिए। लाल माईट एवं जैसिड के आक्रमण होने पर साईपरमेथ्रिन का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

हरा फुदका (जैसिड)

हरे रंग के छोटे कीट के शिशु व प्रौढ़ दोनों भिण्डी की पत्तियों के निचले हिस्से में रहते हैं और रस चूसते है। जिसके फलस्वरूप पत्ती किनारे से पीली होकर सिकुड़ती है तथा प्यालानुमा आकार बनाती है और धीरे—धीरे सूख जाती है। इसके नियन्त्रण के लिए निम्न उपाय करना चाहिए।

• बीज को गाउचे (2.5—3 ग्राम/किलो बीज) से उपचारित करके बोने से कीट का प्रकोप 40—45 दिनों तक नहीं होता है।

• कानफिडोर का 0.3 मि0ली0 प्रति ली0 पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़कने से 30 दिन तक इस कीट का प्रकोप नहीं होता है।

• 4 प्रतिशत नीम गिरी एवं 0.5 मिली लीटर इन्ड्रोट्रान (चिपकने वाला पदार्थ) प्रति लीटर पानी के साथ मिलाकर छिड़कने से फुदका का प्रकोप कम हो जाता है।

भिण्डी की लाल माइट

गर्मी वाली भिण्डी में यह बहुत हानिकारक होती है। शिशु तथा प्रौढ़ पत्तियों के निजली सतह पर रस चूसते हैं और वहीं सिल्कनुमा जाला से ढँकें रहते है। इनके रस चूसने से पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीली चित्तियाँ उभर आती है और धीरे—धीरे पत्तियां लाल होकर सूख जाती हैं।

• इसके नियन्त्रण के लिए खेत में गर्मी के मौसम में हमेशा नमी बनायें रखना चाहिए।

• कर्नल एस (डायकोफाल 18.5 ई0सी0) का 2.5 मि0ली0 प्रति ली पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

• क्वीनाफलास 30 ई0सी0 का 1 मिली0 लीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करने से माईट का नियन्त्रण किया जा सकता है।

पत्ती काटने वाला कीट

पिछले कुछ सालों से भिण्डी में इसका प्रकोप बढ़ता जा रहा है। इस कीडे की सुड़ियाँ पत्ती के दोनों सतहों पर पायी जाती है, लेकिन छोटी सूड़ी पत्तियों की निचली सतह पर व बड़ी सूड़ी ऊपरी सतह पर रहकर पत्तियों में छेद करती है। इससे बचाव के लिए निम्नलिखित में से कोई एक उपाय अपना सकते हैं।

ससाइपरमेथ्रिन 0.5 मिली0 या पालीट्रिन सी नामक दवा 0.7 मिली0 प्रति लीटर पानी में मिलाकर (बरसात वाली भिण्डी में स्टिकर टीपोल 0.5 मिली0) मिलाकर 15 दिनों के अन्तराल पर 2—2 बार छिड़काव करना चाहिए।

प्रमुख रोग

पीत शिरा मौजेकः—

यह एक विषाणु रोग है जो सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है। इसके प्रकोप से पौधों की बढ़ोत्तरी रूक जाती है एवं पत्तियों की नसे पीली पड़ जाती है। जब तने और फलों का रंग पीला पड़ जाए तो समझे कि रोग का प्रकोप ज्यादा है। इसके बचाव के लिए निम्नलिखित उपाय करें।

• इस रोग से अवरोधी किस्मों का प्रयोग करें।

• बीज को इमिडाक्लोप्रिड (2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से शोधित करके लगाना चाहिए।

• मेटासिस्टाक्स 1.5 मिली प्रति लीटर पानी में घोल कर 15 दिन के अन्तराल पर 3 बार छिड़काव करें।

भिण्डी का पत्ती मरोड़ विषाणु रोग

इस रोग में पत्ती का डंटल अंग्रेजी के एस आरकार की

हो जाता है। पत्ती की नसों में मोटी–मोटी गाँठे उभार लिए हुए बन जाती हैं। इसके प्रकोप से ग्रसित पत्ती को सूर्य के प्रकाश में देखने पर नसों के बीच मोटी हरे रंग की गांटे स्पष्ट दिखाई देती हैं। इसकी पत्ती कुछ मोटी व मोमी हो जाती है। इससे प्रभावित पौधे सामान्य से कुछ ज्यादा ही हरा दिखाई देते हैं। एवं पौधों में फूल नहीं आते हैं। यदि फूल आ भी जाते हैं और फली बन जाती है तो उसमें बीज नहीं बनता है। पित शिरा मोजैक विषाणु रोग की रोकथाम के लिए फैलाने वाले वाहक (सफेद मक्खी) के नियन्त्रण हेतु दिये गए सुझाव निर्देश का पालन करें।

सूखा व जड़ गलन रोग

यह जमीन में उपस्थित फफूँद से फैलता है। फसल किसी भी अवस्था में प्रभावित हो जाती है। शुरूआत में पौधे पीले दिखाई देते हैं तथा बाद में सूख जाते हैं। यह दो प्रकार के के फफूँदो से होता है। इसके नियन्त्रण के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जाते हैं। फसल चक्र का प्रयोग करके इसको कुछ हद तक रोका जा सकता है।

बीज को 0.3 प्रतिशत थिरम या कैप्टान 2.5 ग्राम प्रति किग्रा की दर से उपचारित करके बुआई करना चाहिए। गर्मी की फसल को समय से सिंचाई करते रहना चाहिए। बरसात में जल निकास का उचित प्रबन्ध करना चाहिए।

काला धब्बा

इसका प्रभाव बरसात की फसल में सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से शुरू होता है एवं कम तापक्रम व अधिक आद्रता के साथ बढ़ता जाता है। इसके बचाव के लिए ट्राइएडिमीफोन या बिट्रेटीनाल (0.5) ग्राम अथवा थायोनेट–मिथाइल या कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम) प्रति लीटर पानी में घोलकर 8 से 10 दिन के अन्तराल पर तीन बार छिड़काव करें।

चूर्णी फफूँद रोग

इसके प्रभाव से पत्तियों पर गहरे भूरे रंग का चूर्ण बन जाता है। जिससे बाद में पत्तियां सिकुड़ कर सूख जाती है। यह सूखे मौसम व तापक्रम कम होने पर काफी तेजी

से फैलता है। इससे बचाव के लिए बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत या घुलनशील गंधक 0.3 प्रतिशत छिड़काव करना चाहिए।

(पृष्ठ 07 का शेष)

जिससे जड़ें स्वस्थ और अधिक गहराई तक जाती हैं। जिससे पौध ज्यादा पोषक तत्वों को ग्रहण कर सकते है। पौध जितना स्वस्थ होगा कल्लों की संख्या, बालियों की संख्या, बालियों की लम्बाई अधिक होगी फलस्वरूप ऊपज भी ज्यादा होगी।

7. सिंचाई

स्री पद्धति में धान के खेत में हमेशा निरंतर जल बनाए रखने की आवश्यकता नहीं होती है, खेत में हमेशा नमी (लगभग 1–2 सेमी स्थिर जल भराव) बरक़रार रखने की आवश्यकता होती है। अगर खेत में पानी जमा होता है तब वायुसंचार न होने के कारण जड़ें मर जाती हैं। मृत जड़ का रंग भूरा या मटमैला की तरह दिखने लगता है। पौधों केअच्छे विकास के लिए यह जरूरी है कि खेत में पानी का ज्यादा जमाव नहीं होना चाहिए,और जब आवश्यकता अनुसार सिंचाई की जाती है तब जड़ को सम्पूर्ण वायुसंचार मिलता है और पौध का विकास अच्छा होता है।

8. खरपरवार–प्रबन्धन

खरपरवार स्री पद्धति में पारम्परिक विधि से ज्यादा होता है, लेकिन खेत में खरपतवार को निकाल कर बाहर फेंकने के वजाय अगर वीडर का प्रयोग करते हुए उसे वापस मिट्टी में मिला देने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। जिसके परिणामस्वरूप दोहरा लाभ मिलता है; पहला मिट्टी मैं वायुसंचार बढ़ जाता है और दूसरा जो खरपरवार वापस मिट्टी में मिला दिया जाता है वो जैविक तत्त्व में तबदील हो कर जीवांश कार्बन की मात्रा को बढ़ा देता है इसकी वजह से जड़ और पौध का उचित विकास होता है और ज्यादा उपज की प्राप्ति की जा सकती है।

स्री पद्धति की खेती में सावधानियाँ

- जल जमाव वाले क्षेत्र के लिये उपयुक्त नहीं है।
- श्रम संसाधन के कमी वाले क्षेत्र के लिये उपयुक्त नहीं है।
- पौधशाला और खेत की दूरी अधिक होने पर भी स्री पद्धति से रोपाई में कठिनाई होती है।
- संसाधन विहीन क्षेत्र में भी समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

बीज उपचार क्यों और कैसे

सुनील कुमार* एवं वी.पी. शाही**

फसल उत्पादन के लिए बीज एक महत्वपूर्ण अंग है किसानों का 10 से 15 प्रतिशत भाग अकेले बीज पर ही खर्च होता है सामान्यता फसलों के सभी रोग बीज, मिट्टी व हवा के माध्यम से फैलते हैं फसलों को बीज जनित, मृदा जनित, व वायुजनित रोगों से बचाने हेतु बीजों को रासायनिक तत्वों व जैव रसायनों आदि से उपचारित करना आवश्यक होता है बीज उपचार करने से बीच में उपस्थित आंतरिक व बाहरी परत के रोग व कीट नष्ट हो जाते हैं जिससे बीजों का स्वस्थ व अधिक अंकुरण प्राप्त होने के साथ–साथ फसल उत्पादन में भी 10 से 15 प्रतिशत की वृद्धि मिलती है। इन जैविक रासायनिक पदार्थों से बीजोंको उपचारित करना ही बीज उपचार कहलाता है। किसान भाइयों गुणवत्ता युक्त व अधिक फसल उत्पादन प्राप्त करने के लिए नितांत आवश्यक है की हमेशा उन्नतशील और रोग व कीट प्रतिरोधी किस्मों के स्वच्छ स्वास्थ और प्रमाणित बीजों से ही बुवाई करें। बीज उपचार को फसल उत्पादन की प्रक्रिया में प्रथम श्रेणी में रखा जाना बहुत ही आवश्यक है।

बीज क्या है ।बीज एक परिपक्व बीजाण्ड जो निशेचन के बाद क्रियाशील होता है। बीज उचित परिस्थितियां या जैसे जल, वायु, सूर्य, प्रकाश आदि मिलने पर क्रियाशील होता है बीज कहलाता है।

बीज उपचार क्या होता है

अधिक उत्पादन व गुणवत्ता युक्त फसल उत्पादन प्राप्त करने के लिये बीज को निरोग एवं स्वस्थ बनाने के लिये बीज को रसायन जैव रसायन एवं कल्चर से उपचारित करना चाहिए उपचारित करने की यही सब प्रक्रियायें बीज उपचार कहलाती है

बीज उपचार की आवश्यकता क्यों

बीजों को प्रारम्भ से ही बीज जनित रोग व कीटों के प्रभाव को कम या रोकने हेतु बीजों को उपचारित करना आवश्यक होता है क्योंकि ये रोगों व कीटों से होने वाले नुकसान को कम करता है बीजो को उपचारित न करने पर पौधों की वृद्धि के समय रोगों व कीटों से बचाने के लिए किसानों को अधिक धन की आवश्यकता पडती है।

बीजों को उपचारित करने की बिधियां

1.ड्रम विधि– से बीजों को उपचारित करने के लिए ड्रम में दवा व बीजों की निर्धारित मात्रा डालकर 5 से 10 मिनट तक घुमाया जाता है अथवा जबतक दवा बीजों में मिल न जाए ड्रम विधि में एक बार में 25–30 किलो ग्राम बीज उपचारित किया जा सकता है।

2.घड़ा विधि द्वारा– घड़ा विधि बीज उपचार की एक प्राचीनतम विधि है इस विधि में बीजों व दवा की निर्धारित मात्रा डालकर घड़े का मुंह पॉलीथिन से बंद कर 10 मिनट तक अच्छी तरह से मिलाया जाता है कुछ देर बाद घड़े का मुंह खोलकर बीजों को अलग रखते है।

घड़ा विधि द्वारा बीज उपचार

3.भीगे बीज उपचार विधि– पॉलीथिन चादर या पक्की फर्श पर बीजों को फैला दे उसके बाद हल्का पानी का छिड़काव करे रसायन या जैव रसायन की अनुशंसित मात्रा बीज के ढेर पर डाल कर उसे अच्छी तरह मिलाकर सुखा लें।

4.स्लरी बीज उपचार–इस विधि में स्लरी (घोल) बनाने हेतु रसायन या जैव रसायन की अनुशंसित मात्रा को 10 लीटर पानी की मात्रा में किसी बर्तन में अच्छी तरह मिला लें इस घोल में बीज/कंद/पौधे की जड़ों को 10 से 15 मिनट तक डालकर रखे फिर छाया में सुखा लें।

किसान भाई बीज उपचार कैसे करे–

1 जैव रसायन द्वारा–

- ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम / किलोग्राम बीज
- स्यूडोमोनस – 4.0–5.0 ग्राम/ किलोग्राम बीज।

2 रसायन द्वारा–

- कार्बेंडाजिम+ मैनकोज़ेब 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज।
- कैप्टान या थीरम 2.5 ग्राम किलोग्राम बीज। कीट नियंत्रण हेतु।

---

*वि.व.वि. (बीज प्रौद्योगिकी), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र बहराइच प्रथम, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या।

3 कीट नियंत्रण हेतु–

- क्लोरोपायरीफास 5.0 मिलीलीटर / किलोग्राम बीज।
- मोनोक्रोटोफॉस 5.0मिलीलीटर / किलोग्राम बीज।

4 पोषक तत्व स्तरीकरण हेतु–

अ. नत्रजन स्तरीकरण हेतु–

राइजोबियम , एजोटोबेक्टर एवं एजोस्पाइरलिस 250 ग्राम / 10–12 किलोग्राम बीज।

ब. फास्फोरस बिलियन हेतु–

पी एस बी फास्फो बैक्टीरिया 250 ग्राम /12 किलोग्राम।

स. पोटाश स्तरीकरण हेतु–

पोटाशिक जीवाणु 250 ग्राम / 10–12किलोग्राम।

5.प्राकृतिक विधि से बीज उपचार

प्राकृतिक विधि द्वारा बीजों को उपचारित करने के लिए बीजामृत तैयार करके बीजों को उपचारित किया जाता है 100 किलोग्राम बीज के लिए 5 किलोग्राम देसी गाय का गोबर 5 किलोग्राम देसी गाय का मूत्र ढाई सौ ग्राम कली चूना 20 लीटर पानी व खेत की मिट्टी मुट्ठी भर लेकर इन सभी सामग्रियों को 24 घंटे एक साथ पानी में डालकर रखें दिन में दो बार लकड़ी सें चलायें बाद में बीज पर बनाए हुए बीजामृत का छिड़काव करें। बीजों को छिड़काव के बाद छाया में सुखाएं इसके बाद बीज की बुवाई करें जिससे बीजों को रोग मुक्त व अधिक अंकुरण प्राप्त किया जा सकता है।

बाहय रोगों से बचाव के लिये बीजों का उपचार

सूखा बीज उपचार का प्रयोग बीजों को बाहय रोगों से बचानें के लिये प्रयोग किया जाता है जिसमें प्रमुख रूप से कैप्टान थीरम एग्रोसन जी एन वीटावैक्स आदि का प्रयोग किया जाता है

आन्तरिक रोगों से बचाव के लिए बीजों का उपचार

बीजों को आन्तरिक रोगों से बचाने के लिए सूखे फफूंदीजनकों का भी प्रयोग किया जाता है बीजों के जमाव के दौरान बीज फफूंदीजनक को अवशोषित करके रोगों को निष्क्रिय कर देते है।वीटावैक्स आदि के प्रयोग से गेंहू की फसल को लूज स्मट रोग से बचाया जा सकता है।

गर्म पानी से उपचार– ये विधि गेंहू के लूज स्मट रोग मे प्रयोग की जाती है इस विधि मे पानी को 52 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान तक गर्म करके बीजों को डुबोकर 10 मिनट तक डुबोकर बीज को उपचारित करते है।

सौर ताप उपचार– ये विधि भी गेंहू के लूज स्मट रोग मे प्रयोग की जाती है। इस विधि मे बीज को सुवह चार घण्टे के लिये पानी मे भिगोकर धूप मे सूखने के लिये पतली पर्त मे फैला दिया जाता है।

बीज उपचार करते समय सावधानियाँः–

- बीजों को उपचारित करने के लिए खरीदे गए नए रसायन की अंतिम दिनांक देख लेना चाहिए। बीजों को उपचारित करने के बाद छायादार स्थान पर ही सुखाना चाहिए।
- बीजों को उपचारित करने हेतु रोगों के अनुसार ही रसायनिक व जैविक पदार्थों का प्रयोग करें।
- बीजों को उपचारित करने के बाद तुरन्त बोना चाहिए।
- यदि बोने के बाद उपचारित बीज की मात्रा बच जाए तो उसे ना तो जानवर को खिलाना चाहिए न ही खुद खाना चाहिए।
- दवा के खाली डिब्बे या पैकेट को तुरन्त नष्ट कर देना चाहिए।

बीज उपचार करने के लाभ

- बीज उपचार की प्रक्रिया अपनाने से किसान अपनी फसल को बीज व मृदा जनित रोगों से बचा सकते है।
- बीज उपचार करने से पैदावार में वृद्धि होती है।
- बीजों को उपचारित करने से किसानों को अच्छा व गुणवत्ता युक्त बेहतर फसल उत्पादन प्राप्त होता है।
- बीज उपचार करने से अच्छा बीजो का अच्छा अंकुरण होता है।

निष्कर्ष :–

- बीज उपचार एक कम लागत तकनीक है।
- किसान भाई इसे आसानी से अपना सकते है।
- बीजों को उपचारित करके बोने के उपरान्त फसल में सुरक्षा के अन्य उपायों की कम आवश्यकता पड़ती है।

किसानों को उपज में 12–15 प्रतिशत की वृद्वि प्राप्त होती है।

ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई के लाभ

संदीप कुमार पाण्डेय एवं प्रमोद कुमार मिश्र

ग्रीष्मकालीन जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने पर खेत की मिट्टी ऊपर–नीचे हो जाती है तो मिट्टी के कणों के बीच की दूरी बढ़ जाती है। मिट्टी में बनने वाली केशिका नलियों का व्यास बढ़ जाता है तो केशिका वृद्धि कम हो जाती है। यह मिट्टी में नमी बनाए रखने में मदद करता है। इस जुताई से जो ढेले पड़ते हैं वह धीरे–धीरे हवा व बरसात के पानी से टूटते रहते हैं साथ ही जुताई से मिट्टी की सतह पर पड़ी फसल अवशेष की पत्तियां पौंधों की जड़ें एवं खेत में उगे हुए खरपतवार आदि नीचे दब जाते हैं जो सड़ने के बाद खेत की मिट्टी में जीवाश्म एवं कार्बनिक खादों की मात्रा में बढ़ोतरी करते हैं। इससे भूमि की उर्वरता स्तर एवं मृदा की भौतिक दशा या भूमि की संरचना में सुधार होती है। इस प्रकार की जुताई से मृदा का सूर्य की किरणों से सीधा उपचार होता है एवं हानिकारक कीट व पौध रोगकारक नष्ट हो जाते हैं तथा मिट्टी की जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है। इससे जड़ो की अच्छी वृद्धि होती है। इस कार्य से पीणकनाशियों के अवशेषो का तीव्र विघटन होता है। इसके साथ–साथ मृदा भी संरक्षित होती है। ग्रीष्मकालीन जुताई के बाद खेती की लागत में कमी आती है, साथ ही उपज में लाभ औसतन 10 प्रतिशत तक बढ़ जाता है। ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई रबी मौसम की फसल कटने के बाद शुरू हो जाती है, जो बरसात शुरू होने तक चलती रहती है। फसल की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए रबी की फसल की कटाई के तुरन्त बाद गहरी जुताई कर ग्रीष्म ऋतु में खेत को खाली रखना बहुत ही लाभदायक रहता है।

ग्रीष्मकालीन जुताई के लिए महत्पूर्ण मुख्य बातें

- ग्रीष्मकालीन जुताई हर दो–तीन वर्ष में एक बार जरूर करें।
- जुताई के बाद खेत के चारों ओर एक ऊँची मेड़ बनाने से वायु तथा जल द्वारा मिट्टी का क्षरण नहीं होता है तथा खेत वर्षा जल सोख लेता है।
- गर्मी की जुताई हमेशा मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी करनी चाहिए जिससे खेत की मिट्टी के बड़े–बड़े ढ़ेले बन सकें क्योंकि ये मिट्टी के ढेले अधिक पानी सोखकर पानी खेत के अन्दर नीचे उतरेगा। इससे भूमि की जलधारण क्षमता में सुधार होता है। किसान भाईयों यदि आप अपने खेतों की गर्मी की जुताई करेंगे तो निश्चित ही आपकी आने वाली खरीफ मौसम की फसलें न केवल कम पानी में हो सकेगी बल्कि बरसात कम होने पर भी फसल अच्छी हो सकेगी तथा खेत से उपज भी अच्छी मिलेगी तथा खर्चे की लागत भी कम आयेगी।
- गर्मी के महीनों के दौरान दिन का तापमान बहुत अधिक होता है। इस समय अधिकांश खेत खाली रहते हैं। अतः शुष्क क्षेत्रों में हानिकारक जैविक कारकों (पादप रोग, निमेटोड, कीट–पतंगे, खरपतवार) के नियंत्रण के लिए ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई कम खर्चे में सबसे सफल तकनीक है।
- इस तकनीक का उपयोग करने से हानिकारक जैविक कारकों के नियंत्रण के साथ–साथ मृदा की जल धारण क्षमता में भी वृद्धि होती है, जो कि शुष्क क्षेत्रों की एक परम आवश्कता है। ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई, वर्षा के अधिकांश जल को मृदा के अन्दर अवशोषित करने में अहम भूमिका निभाती है, जिसके फलस्वरूप बरसात के दिनों में खेत नमी संरक्षण के लिए तैयार हो जाते हैं।

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई के लिए प्रयुक्त महत्वपूर्ण कृषि यंत्र

सब सोयलर

खेतों की बार–बार एक ही गहराइयों तक जुताई करने तथा खेतों में भारी मशीनरी जैसे ट्रैक्टर, कम्बाइन मशीन, थ्रेशर, ट्रैक्टर–ट्राली इत्यादि के आवागमन से एक निश्चित गहराई पर सख्त परत का निर्माण हो जाता है। इस परत के नीचे पानी व हवा का आवागमन बाधित हो जाता है, जिससे खेत में जलभरण जैसी समस्या आने लगती है। इसका असर सीधा फसल उत्पादन पर होता है। ऐसे में इस सख्त परत को तोड़ने की आवश्यकता होती है जिसके लिए सब सोयलर हल अत्यधिक उपयुक्त हल है।यहसतह के

कृषि महाविद्यालय कोटवा, आजमगढ़, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

नीचे की कठोर भरी हुई मिट्टी को तोड़ने एवं पानी की निकासी को रोककर खड़े पानी को खत्म करने में मदद करता है। इससे एक बेहतर प्रबंधन, एवं बेहतर उत्पादक खेत प्राप्त होता है। इस हल से 2.5 सेंटीमीटर मोटा तथा 18 सेंटीमीटर चौड़ा होता है जो कि एक मजबूत फ्रेम में लगा होता है एवं यह हल 80 सेंटीमीटर की गहराइयों तक जुताई करने में आसानी होती है। इस हल के द्वारा जुताई करने के लिए करीब 50 एच. पी. (अश्व शक्ति) के ट्रैक्टर की जरूरत पड़ती है। फसलों की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 3–4 वर्ष में एक बार सब सोयलर हल से जुताई करना अत्यंत लाभदायक होता है।

मोल्ड बोर्ड हल या मिट्टी पलट हल

प्राथमिक जुताई में यह हल मिट्टी को काटकर एवं पलटने एवं ढेले तोड़ने में सक्षम है। खेत में खड़े खरपतवारों को उखाड़ कर मिट्टी में नीचे दबा देता है, जिससे खरपतवार सड़गल जाते हैं। खेत खरपतवार मुक्त हो जाता है।इसके अतिरिक्त हरी खाद, गोबर की खाद इत्यादि को भी मृदा में मिलाने के लिए यह हल अत्यधिक कारगर है। ट्रैक्टर चालित इस हल से लगभग 30 सेंटीमीटर तक गहरी जुताई की जा सकती है।

तवेदार हल

ऐसे खेत जहाँ भारी काली मिट्टी हल को चिपकती हो, कंकड़ पत्थर तथा अधिक खरपतवार होवहां मोल्ड बोर्ड हल की तुलना में तवेदार हल अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं। इस हल में घूमने वाले तवे लगे होते हैं, जिनका सामान्य व्यास 60–70 सेंटीमीटर होता है। तवेदार हल बियरिंग पर घूमते हैं तथा जुताई की गहराई को हाइड्रोलिक प्रणाली से नियंत्रित करते हैं।

कल्टीवेटर

जहाँ मृदा हल्की हो वहां कल्टीवेटर से भी ग्रीष्मकालीन जुताई की जा सकती है। चूँकि कल्टीवेटर को सब सोयलर हल या तवेदार हल या मोल्ड बोर्ड हल की तुलना में कम पावर केट्रैक्टर से भी खींचा जा सकता है तथा कम डीजल व खर्चे में जुताई सम्भव हैं। कल्टीवेटर में 7 से लेकर 13 तक स्प्रिंग–टाइन लगे होते हैं। इसका उपयोग हल्की मृदाओं में ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई के अतिरिक्त खेत में खाद मिलाने, विस्तृत पंक्ति की फसलों में निराई–गुड़ाई करने तथा भारी मृदाओं में अन्य हलों से जुताई करने के पश्चात खेत को तैयार करने के उपयोग में लाया जाता है।

डिस्क हैरो

इस हल का उपयोग मिट्टी को काटकर पलटने तथा खरपतवार नियंत्रण के लिए करना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह हल हल्की जुताई के लिए भी उपयुक्त है अतः इसे द्वितीय भू–परिष्करण बहुउद्देश्यीय हल भी कहा जा सकता है।

गर्मी की जुताई भूमि की भौतिक अवस्था में सुधर कर फसलों की वृद्धि के लिए आदर्श स्थितियाँ उत्पन्न करने के उद्देश्य से की जाती है। इस प्रकार इन क्रियाओं की सफलता, जुताई के समय भूमि की नमी के ऊपर निर्भर करती है। जुताई का कार्य करने में कार्य की तुलनात्मक सुविधा को कार्य योग्यता कहा जाता है। हल्की मध्यम और भरी भूमियों का नामकरण इन भूमियों में जुताई के लिए लगने वाला खिचाव शक्ति के आधार पर दिया गया है।

- भौतिक प्रभाव
- रासायनिक प्रभाव
- जैविक प्रभाव

भौतिक प्रभाव

जुताई सम्बन्धी क्रियाओ को उनके भौतिक, रासायनिक तथा जैविक क्रियाओ पर प्रभाव के आधार पर मुख्य तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रभाव खेती की जाने वाली तथा परती भूमियों में समान रूप से पाए जाते है। गर्मी की जुताई से भौतिक क्रियाओ पर प्रभाव पड़ता है क्यूँकि मृदा को एक निश्चित गहराई तक खोदकर ढीली तथा भुरभुरी बनाना जिससे बीजों की बुवाई की जा सके तथा बीजों के अंकुरण के लिए उपयुक्त स्थिति प्रदान की जा सके।

रासायनिक प्रभाव

गर्मी की जुताई से मिटटी की रासायनिक क्रियाओ पर निम्न प्रभाव पड़ता है जी निम्न हैं:–

- मृदा अपक्षय क्रिया में वृद्धि करना।
- समस्याग्रस्त भूमियों का सुधार करना।
- जीवांश पदार्थ के विघटन तथा योगिकीकरण द्वारा पौधों के पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि करना।

(शेष पृष्ठ 19 पर)

टिशू कल्चर केला (ग्रैंडनैन) की उत्पादन तकनीक

एस. पी. सिंह एवं एस. के. सिंह

केला विश्व में उत्पादन एवं प्रति व्यक्ति उपयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण फल है। केला भारत के उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्रों में प्रमुख रूप से उगाया जा रहा है वर्तमान में भारत का स्थान केला उत्पादक देशों में प्रथम है। उत्तर प्रदेश के तराई जनपद मुख्यतः बस्ती, सिद्धार्थनगर, गोरखपुर, संतकबीरनगर, देवरिया, महाराजगंज, गोंडा, बहराइच, श्रावस्ती, बलरामपुर एवं बाराबंकी जनपद केला की खेती के लिए उपयुक्त हैं इसके अतिरिक्त अन्य जनपद फैजाबाद, फतेहपुर, पीलीभीत, सीतापुर और कौशांबी में भी केले की खेती की जा रही है।

भूमि एवं जलवायु– केला की खेती के लिये अच्छे जलनिकास वाली एलुवियल भूमि अच्छी होती है। केला उथली जड़ वाली फसल होने के कारण मिट्टी की गहराई जल निकास एवं कार्बनिक पदार्थ की मिट्टी में मात्रा उत्पादन को निर्धारित करने वाले प्रमुख कारक हैं। ऐसी भूमि जिसका पीएच 6.5 से 7.5 हो उनमें पौधों की वृद्धि फल विकास एवं कुल उत्पादन के लिए बहुत अच्छी होती है। केला मुख्य रूप से उष्ण जलवायु का पौधा है अच्छे उत्पादन के लिए 20 से 35 डिग्री सेल्सियस तापमान अच्छा रहता है। पाला वाले क्षेत्रों में केले की खेती नहीं करना चाहिए। गर्मी के महीनों में ज्यादा तापमान होने के कारण पत्तियां झुलस जाती हैं एवं उत्पादन प्रभावित होता है। केला उत्पादन के लिए औसत 1500 मिली मीटर वर्षा अच्छे वितरण के साथ बहुत अच्छी होती है। जल भराव की स्थिति में फफूंद वाली बीमारियों के प्रकोप की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

टिशू कल्चर प्रजाति (ग्रैंडनैन)– यह अधिक उत्पादन देने वाली एक नवीन किस्म है इसके पौधे 2.3 से 2.5 मीटर ऊंचे, तने का घेरा 60 से 62 सेंटी मीटर, घार में 8 से 10 गुच्छे प्रति घार, फलियों की संख्या 150 से 165 तथा प्रत्येक घार का औसत वजन 30 से 35 किलोग्राम होता है। यह किस्म रोपाई के लगभग 12 माह बाद तैयार हो जाती है इसके पौधे तेज हवाओं को सहन कर लेते हैं। टिशू कल्चर पौधों को प्रयोगशाला से बाहर निकालने के बाद अच्छी देखरेख की आवश्यकता होती है। प्रयोगशाला से पौधों को निकालने के बाद 10 से 12 दिन तक प्राथमिक नर्सरी में रखते हैं इसके बाद 40 से 45 दिन तक द्वितीयक नर्सरी में रखा जाता है। द्वितीयक नर्सरी में जब पौधे में 5 से 6 स्वस्थ पत्तियां आजाएं और पौधों की ऊंचाई 30 से 40 सेंटीमीटर हो जाए तो पौधों को रोपण के लिए उपयुक्त माना जाता है।

भूमि की तैयारी एवं रेखांकन– भूमि की चार या पांच बार जुताई करके समतल बना लेना चाहिए। इसके बाद लाइन से लाइन एवं पौधे से पौधे की दूरी 1.8 गुणा 1.8 या 1.8 गुणा 1.5 मीटर की दूरी पर 2 फीट घनाकार गड्ढा की खुदाई करें एवं गड्ढों की भराई करते समय प्रति गड्ढे में 5 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद 200 ग्राम नीम की खली 10 ग्राम फोरेट 10 जी मिट्टी के साथ मिलाकर 10 जून तक गड्ढों की भराई कर देना चाहिए।

रोपड़ का समय– उत्तर प्रदेश में केला के रोपड़ का उपयुक्त समय 15 जून से 15 जुलाई होता है।

पुत्ती का उपचार–रोपड़ से पूर्व घनकंद या पुत्ती को 1 ग्राम कार्बेंडाजिम और 1.5 मिलीलीटर मोनोक्रोटोफॉस प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 10 मिनट तक उपचारित करना चाहिए इससे सेगाटो का, पर्ण चित्ती रोग और कंद छेदक कीट के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

रोपड़ विधि– टिशु कल्चर विधि से विकसित पौधों की पॉलिथीन सावधानी से काटकर निकाल दें ध्यान रहे पौधों की पिंडी को नुकसान न हो। इसके बाद पौधों को गड्ढे के बीच में इस तरह रोपाई करें के पिंडी की मिट्टी की सतह से बिल्कुल बराबर रहे तथा जड़ों को क्षति न पहुंचे।

रोपाई के तुरंत बाद कॉपर ऑक्सिक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें एवं 7 दिन बाद 18:18:18 एनपीके की 200 ग्राम मात्रा प्रति टंकी

कृषि विज्ञान केंद्र बेलीपार, गोरखपुर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

(15 लीटर पानी) में मिलाकर छिड़काव करें। रोपाई के 15 दिन बाद कॉपर ऑक्सिक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें एवं रोपाई के 20 दिन बाद 12:32:16 एनपीके उर्वरक 25 ग्राम प्रति पौधे की दर से मिट्टी में प्रयोग करें।

केले में पोषक तत्वों की उपयोगिता

नत्रजन– पोषक तत्वों में नत्रजन का प्रमुख स्थान है। केले का पौधा नत्रजन का भंडारण नहीं करता इसीलिए यदि नत्रजन की कमी वृद्धि के समय होती है तो कमी के लक्षण तुरंत दिखाई पड़ते हैं पक्तियां पीले रंग की हो जाती है एवं मिडरिब, पेटियोल और लीफ सीथ पर लाल गुलाबीटिंज दिखाई देते हैं। पत्तियां गुच्छे के आकार में दिखाई देती हैं अधिक कमी होने पर जड़ों का विकास रुक जाता है। नत्रजन की ज्यादा मात्रा से पौधों की वृद्धि तो काफी ही होती है परंतु घार का आकार छोटा हो जाता है। इसलिए ज्यादा नत्रजन की मात्रा न केवल बेकार जाती है बल्कि फसल एवं उत्पादन को नुकसान पहुंचाती है।

फास्फोरस– केले को फास्फोरस की आवश्यकता कम होती है एवं कमी के लक्षण पौधों पर बहुत कम दिखाई पड़ते हैं क्योंकि केले का पौधा फास्फोरस का भंडारण करता है और आवश्यकता के समय पूर्ति करता है। सामान्यतया फास्फोरस की कुल आवश्यकता पौधों द्वारा पौधे लगाने के तीसरे से नौवें महीने के बीच शोषित की जाती है। फास्फोरस की कमी से पौधों की वृद्धि रुक जाती है एवं जोड़ों का विकास भी रुक जाता है पुरानी पत्तियों के किनारे कटे–फटे एवं क्लोरोटिक हो जाते हैं।

पोटेशियम– केला उत्पादन के लिए आवश्यक तत्वों में पोटेशियम का सबसे ज्यादा महत्व है। केले के पौधे में पोटेशियम की मात्रा अन्य पोषक तत्व से ज्यादा होती है। पोटेशियम की कमी से पुरानी पत्तियों का रंग नारंगी पीला हो जाता है एवं पत्तियां जल्द सूखने लगती हैं। पत्तियों का आकार छोटा, घार का देर से निकलना, प्रतिधार में फलों की संख्या में कमी, फलों का आकार छोटा एवं फलों का भराव कम होता है। इस प्रकार पोटेशियम की कमी उत्पादन पर सीधा विपरीत प्रभाव डालती है। पोटेशियम की कमी से पौधों की प्रतिरोधक क्षमता में भी कमी आ जाती है।

कैल्शियम– कैल्शियम बहुत स्थिर तत्व है केले के पौधों में इसकी कमी के लक्षण सबसे पहले नई पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। पत्तियां सूखने लगती हैं एवं किनारे कटे–फटे एवं नैक्रोटिक हो जाते हैं। कैल्शियम की कमी के कारण फलों की गुणवत्ता घट जाती है एवं फल के पकने पर छिलका फट जाता है।

मैग्नीशियम– इसकी कमी सामान्यतया केला के पुराने पौधों में पाई जाती है। पोटेशियम की ज्यादा मात्रा देने से भी मैग्नीशियम की कमी के लक्षण दिखाई पड़ते हैं। पत्तियों के किनारों का पीला होना सीथ का तने से अलग होना पेटियोल पर बैंगनी धब्बे बनना मैग्नीशियम की कमी के प्रमुख लक्षण हैं।

सल्फर– सल्फर की कमी के लक्षण सबसे पहले नई पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं इसमें पत्तियों का रंग पीला लिए हुए सफेद हो जाता है। सल्फर की कमी बढ़ने से पत्तियों के किनारों पर नैक्रोटिक धब्बे दिखाई देते हैं नशे मोटी हो जाती हैं। पौधों की वृद्धि रुक जाती है एवं घार छोटी हो जाती है। सल्फर का अवशोषण पौधों में फूल आने तक ज्यादा होता है।

जिंक– जिंक की कमी से केले की पत्तियां पतली हो जाती हैं एवं द्वितीयक नसों के बीच में पीले से सफेद रंग की पट्टियां विकसित हो जाती हैं। घार एवं फलों का आकार छोटा एवं फलों का अग्रभाग हल्का हरा हो जाता है। जिंक की कमी क्षारीय भूमियों में ज्यादा होती है। ज्यादा फास्फोरस से भी जिंक की अनुपलब्धता हो जाती है एवं पौधों पर कमी के लक्षण दिखाई देते हैं।

बोरान– बोरान की कमी से केले की पत्तियां मुड़ जाती हैं एवं मुड़ी पत्तियों में नसों के लंबवत निचली सतह परसफेद धारियां बोरान की कमी का मुख्य लक्षण है। बोरान की कमी के लक्षण अम्लीय भूमियों में ज्यादा दिखाई पड़ते हैं।

मैंगनीज– मैगनीज की कमी से पत्तियां समय से पहले सूखना शुरू हो जाती हैं फलों का विकास रुक जाता है। मैग्नीज की कमी से ज्यादा भूमि में किसकी अधिकता से नुकसान ज्यादा होता है। मैग्नीज की अधिकता से कैल्शियमका 30 % मैग्नीशियम का 40% एवं जिंक का लगभग 20% अवशोषण प्रभावित होता है। मैगनीज की अधिकता से फलों की भंडारण क्षमता घट जाती है।

आयरन– आयरन की कमी से नई पत्तियों पर पील/ सफेद क्लोरोसिस पूरी पत्ती पर दिखाई देती है। सूखे की स्थिति में इसके लक्षण ज्यादा दिखाई देते हैं। मैंगनीज की भूमि में ज्यादा मात्रा होने से आयरन की कमी के लक्षण पौधों पर दिखाई देते हैं।

कॉपर–इसकी कमी से पत्तियों की मिडरिब एवं मुख्य नसें पीछे की ओर मुड़ जाती हैं जिससे पौधे का आकार छाते जैसा दिखाई देता है। पत्तियों का रंग पीला तांवे के रंग जैसा हो जाता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा–सूक्ष्म तत्वों में जिंक, आयरन एवं बोरान की कमी के लक्षण केले की पत्तियों पर दिखाई देते हैं इसके लिए तीसरे एवं पांचवे महीने में जिंक सल्फेट का 0. 5% फेरस सल्फेट का 0.5% एवं बोरेक्स का 0.1% का छिड़काव करने से सूक्ष्म तत्वों की कमी पूरी हो जाती है इससे घार व फलों का विकास भी अच्छा होता है।

निकाई गुड़ाई एवं पुत्तियों को निकालना–पौधों के अच्छे विकास के लिए समय–समय पर निकाई–गुड़ाई एवं मुख्य पौधे के बगल से निकलने वाली पुत्तियों को काटते रहना चाहिए। अगर अगले साल पेडी की फसल लेनी हो तो मुख्य फसल में फूल आने के समय एक स्वस्थ पुत्ती को छोड़ना चाहिए जहां तक संभव हो एक ही आयु की पुत्तियों का चयन करना चाहिए।

नर फूलों को काटना– घार में फलियां बन जाने पर घार के अगले भाग पर लटकते नर फूल के गुच्छे को काट देना चाहिए साथ ही सूखी पत्तियों को भी काटते रहना चाहिए।

केले की परिपक्वता एवं घार की कटाई– टिशू कल्चर केलारोपाईसे 12 माह बाद कटाई योग्य तैयार हो जाता है। फलों की पूर्ण परिपक्वता आने पर फल का बाहरी हिस्सा गोलाकार हो जाता है और चिकनापन बढ़ जाता है ऐसी अवस्था होने पर केले की घार को तेज चाकू की सहायता से 6 – 9 इंच लंबा डंठल छोड़कर सावधानी पूर्वक पौधे से अलग करना चाहिए।

केले को पकाना– केले को पकाने के लिए घार को किसी बंद कमरे में रखकर केले की पत्तियों से ढक देते हैं एवं कमरे के कोने में उपले अथवा अंगीठी जलाकर कमरे को गीली मिट्टी से सील बंदकर दिया जाता है। इस प्रकार लगभग 48 से 72 घंटे में केला पककर खाने योग्य तैयार हो जाता है। इस विधि से पकाने पर फलों पर चित्तियां पड़ जाती हैं और मिठास अधिक हो जाती है। इसके अलावा केले की घार पर 500 पीपीएम इथरेल का छिड़काव करके घार को बोरे से ढक देने से केला अच्छी तरह पकता है तथा रंग भी अच्छा विकसित होता है।

केला के प्रमुख कीट व रोग–

केला का तना बेधक (बनानावीविल) कीट– केले का तना बेधक कीट 5 माह पुराने पौधों में नुकसान करना शुरू करता है। प्रारंभिक लक्षणों में पत्तियां धीरे–धीरे पीली होना शुरू हो जाती हैं बाद में तने पर छिद्र दिखाई पड़ते हैं एवं गोंद निकलना शुरू हो जाता है। तने में सड़न हो जाती एवं दुर्गंध आना शुरू हो जाती है। तना बहुत कमजोर हो जाता है। थोड़ी हवा के झोंके से टूट जाता है। इसके नियंत्रण के लिए प्रभावित एवं सूखी पत्तियों को काटकर निकाल देना चाहिए खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिए। घार को काटने के बाद पौधों को जमीन की सतह से काटकर कीटनाशक दवाओं जैसे कार्गोरिल 2 ग्राम प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करके अंडो एवं कीटों को नष्ट कर देना चाहिए।

केले का भृंग कीट (बनानाबीटिल)– यह कीट नई पत्तियां एवं फलों के छिलकों को खाकर मार्च से नवंबरतक अधिक नुकसान पहुंचाता है। इसके नियंत्रण के लिए फोरेट 10 जीया कार्बोफयुरान 3ळ यासेविडालके 10–12 दाने केले के पत्तियों के गोफे में डालना चाहिए। पौधे बड़े हो जाने पर क्वीनालफास 2 मिली/लीटर याइमिडाक्लोप्रिड 1 मिली/लीटर पानी की दर से समय–समय पर 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करना चाहिए।

गुच्छाशीर्ष (बंचीटोप) रोग– यह रोग विषाणु द्वारा उत्पन्न होता है। इस रोग के लक्षण पौधों पर किसी भी अवस्था में देखा जा सकता है पौधों के शीर्ष पर पत्तियों का गुच्छा बन जाता है एवं पौधे बौने रह जाते हैं तथा बढ़वार रुक जाती है। इसके नियंत्रण हेतु संक्रमित पौधों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए एवं

कीटनाशक दवा डाईमिथोएट 1.5 मिली/ लीटर, या मिथाइल–ओ–डिमेटान 1.5 मिली/लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। पुत्तियों का चुनाव स्वस्थ पौधों से किया जाना चाहिए।

केले का उकठा (पनामाविल्ट) रोग– यह रोग पौधरोपण के पांचवें से आठवें महीने के बीच दिखाई देता है। पुरानी पत्तियों में पीलापन किनारे से शुरू होकर मिडरिफ की तरफ बढ़ता है बाद में पूरी पत्तियां पीली हो जाती हैं। प्रभावित पत्तियां तने के चारों ओर लटक जाती हैं। इस रोग से प्रभावित पौधों में घार नहीं बनती है और यदि निकलती भी है तो घार का विकास नहीं होता है। खराब जल निकास एवं अम्लीय भूमि इस फफूंद की वृद्धि में काफी सहायक होती हैं। इसके नियंत्रण के लिए रोपण से पूर्व गड्ढों में ट्राइकोडरमा एवं सड़ी गोबर की खाद (1ः 25) में मिलाकर गड्ढों की भराई करनी चाहिए एवं रोग ग्रसित पुत्तियों व पौधों को 0.1% बाविष्टिन के घोल से उपचारित करके रोपाई करना चाहिए। बीमारी के नियंत्रण के लिए भूमिको 0. 1% बाविष्टिन के घोल से छठवें एवं सातवें महीने में ड्रेंचिग करना चाहिए।

पत्ती धब्बा (सिगाटोका) रोग– इसमें पत्तियों के ऊपरी सतह पर पीले धब्बे बनना शुरू होते हैं जो लंबी पीली धारियों में बदल जाते हैं एवं पत्तियां सूख जाती हैं। बीमारी के ज्यादा प्रभाव से पौधों में घार नहीं निकलती है। इसके नियंत्रण हेतु केले के मुख्य पौधे के बगल से निकलने वाली पुत्तियों को निरंतर काटते रहना चाहिए। जल भराव की स्थिति में आद्रता के बढ़ने से बीमारी का प्रभाव बढ़ता है इसीलिए जल निकास का समुचित प्रबंध करना चाहिए। प्रभावित सूखी पत्तियों को काटकर जला देना चाहिए। फफूंद नाशक दवा कार्बेंडाजिम+मैनकोज़ेब 2.5 ग्राम/ लीटर या प्रॉपिकॉनाजोल 0.1% का छिड़काव करना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा (प्रति एकड़)

समय	यूरिया	डीएपी	म्यूरेट ऑफ फोटोस	सिंगल सुपर फास्फेट	कैल्शियम नाइट्रेट
जुलाई	रोपाईकेसमयउर्वरककाप्रयोगनहीं करें।				
अगस्त	25	50	50	–	–
सितंबर	50	50	50	–	–
अक्टूबर	50	50	–	50	–
नवंबर	50	50	–	50	20
दिसंबर	सल्फर 2 ग्राम एवंकैल्शियमनाइट्रेट 5 ग्रामप्रतिलीटरपानीकीदरसेछिड़कावकरें।				
जनवरी	कैल्शियमएवंबोरान (कैल्सीबोर) 50 मिली. प्रति टंकी (15 लीटरपानी) कीदर से छिड़काव करें।				
फरवरी	40	80	80	–	–
मार्च	40	80	80	–	20
अप्रैल	40	80	80	–	–
मई	15	80	80	–	कैल्सीबोर 3 मिली/लीटर की दर से छिड़काव करें

(पृष्ठ 15 का शेष)

• मृदा में रासायनिक परिवर्तन फसल अवशेष तथा कृषि रसायनों के प्रयोग के कारण उत्पन्न विषाक्त प्रभाव को समाप्त करना होता है।

जैविक प्रभाव

गर्मी की जुताई करने से खेत के मिटटी पर निम्न जैविक प्रभावपड़ता हैः–

• खरपतवार के बीजों को भूमि के नीचे दबाना या ऊपर या ऊपर लाकर सुखाना जिससे वे अंकुरण के अनुकूल वातावरण न मिल पाने से उनके अंकुरण को रोका जाय तथा अवांछित रूप से उगे पौधों को नष्ट करना।

• फसलों पर लगने वाले कीट पतंगों के अण्डों, गिडार, सुंडी, आदि को समाप्त करना तथा फसलों पर लगने वाली रोग व्याधियों के विषाणुओं को नष्ट करना।

• इस क्रिया हेतु फसलों की कटाई के बाद भूमि की गहरी जुताई की जाती है जिसके परिणामस्वरूप कुछ भूमि के भीतर दबकर मर जाते हैं तथा कुछ भूमि के ऊपर आकर अत्यधिक गर्मी से समाप्त हो जाते हैं या पक्षियों द्वारा खा लिए जाते हैं।

इस प्रकार गर्मी की जुताई से भूमि की भौतिक अवस्था में सुधार खरपतवार तथा दूसरी अवांछित वनस्पतियाँ को नष्ट करने मृदा नमी संरक्षण जैविक व रासायनिक प्रक्रियाओं में मनोनकूल परिवर्तन लाने के उद्देश्य से की जाती है।इस प्रकार गर्मी की जुताई से भूमि का स्वास्थ्य और उपज में इजाफा होता है।

लेजर लैंड लेवलिंग खेत को बनाएं समतल, पानी-खाद और ईंधन की करें बचत

देवेश कुमार* एवं अरविंद कुमार सिंह**

लेजर लैंड लेवलरः– लेजर लैंड लेवलर को लेजर समतल भी कहा जाता है। यह मशीन किसानों के लिए बेहद उपयोगी है। विशेषकर ऐसे किसानों के लिए जिनके खेत पूर्ण रूप से समतल नहीं है, उबड–खाबड़ है, जिससे उन्हें फसल बोने, उर्वरक व पानी देने आदि कार्यों में काफी परेशानी होती है। ऐसे खेतों को खेती लायक बनाने का काम इस लेजर लैंड लेवलर मशीन की सहायता से किया जाता है। इस मशीन का काम भूमि को समतल बनाना है ताकि उस भूमि पर खेती करना आसान हो जाए। लेजर लैंड लेवलर से खेत को समतल बनाया जाता है। इससे फायदा यह होता है कि खेत में खड़ी फसल में समान रूप से सिंचाई होती है जिससे पानी की बचत होती है। इसके साथ ही खाद और ईंधन की भी बचत होती है। आज हमारे पास जो भी भूमि उपलब्ध है उसके समतलीकरण द्वारा हम ना सिर्फ संसाधनों की बचत कर सकते हैं चूंकि भूमि की उत्पादकता को भी बड़ा सकते हैं। लेजर परम्परागत विधियों से एकदम हटकर एक अत्याधुनिक तकनीक है, जिसमें किरणों के द्वारा ट्रेक्टर के पीछे लगे मांझा (बकेट) को स्वतः नियंत्रित करके भूमि को पूर्णतया समतल किया जाता है साथ ही फसल की उपज और उत्पादकता को भी बढ़ाता है यह 360 डिग्री पे चारों तरफ लेजर किरणों को उत्सारित कर एक प्राप्तकर्ता (रिसीवर) के माध्यम से नियंत्रक इकाई (कण्ट्रोल यूनिट) को संचालित करता है जो कि भूमि के कटाव व भराव के लिए हाइड्रॉलिक सिस्टम की सहायता से मांझा (बकेट) को नियंत्रित करता है और उपयुक्त मात्रा में मिट्टी को काट एवं उसका भराव कर जरूरी समतलीकरण को प्राप्त करता है।

लेजर लैंड लेवलर मशीन की आवश्यकता क्यों है

भारत देश में इस मशीन की आवश्यकता इसलिए है कि यहां की भौगोलिक परिस्थितियां काफी विषम है। यहां खेती योग्य भूमि उबड़–खाबड़ है। कहीं से ऊंची–नीची तो कहीं से मैदानी तो कहीं से पठारी है। ऐसे में फसल उगाना काफी कठिन हो जाता है। क्योंकि खेती के लिए भूमि का समतल होना बहुत आवश्यक है। अगर मिट्टी की सतह एक सामान नहीं है, तो बोने वाली फसलों के बीज एक सामान खेत में नहीं पहुंचते है तथा बीजों का अंकुरण भी सही तरीके से नहीं हो पाता है। जिसके कारण उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और परिणामस्वरूप उत्पादन में गिरावट आ आती है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए हुए लेजर लेवलर को बनाया गया है।

लेजर लैंड लेवलर के लाभ

खेत के विभिन्न हिस्सों में पानी का एक समान उपयोग परिचालन लागत को कम करता है, और गड्ढों में पानी जमा होने से रोकता है। लेवलर एक समान बुवाई, गहराई तथा एक समान समतलीकरण के कारण फसल को अधिक पैदावार की तरफ ले जाता है। जिसके परिणामस्वरूप अच्छा अंकुरण, बेहतर इनपुट उपयोग दक्षता, बेहतर फसल और अच्छी उपज होती है। कीट और रोग संबंधी समस्याएं कम करता है। खेत की सिंचाई के लिए आवश्यक समय और पानी में कमी तथा खेत में पानी का समान वितरण आसानी से होता हैं।

लेजर लेवलर द्वारा भूमि समतल करने से पानी का अधिकतम उपयोग होता है और 25 से 30 प्रतिशत तक पानी की बचत कर देता है। इसलिए सिंचाई में लगने वाली ऊर्जा (डीजल और बिजली) में बचत करता है।

इसके परिणामस्वरूप 3 से 4 प्रतिशत अतिरिक्त भूमि की वसूली होती है।

भूमि समतल करने से खरपतवार की समस्याओं (धान के लिए 40 प्रतिशत तक) को भी कम करता है। काम को तेजी से किया जा सकता है, और निराई गुड़ाई की लागत को भी कम किया जा सकता है।

परंपरागत समतलीकरण में जहाँ 5–0 सेमी का औसत विचलन होता है की तुलना में लेजर निर्देशित भूमि समतलीकरण में अधिकतम 4–2 सेमी का ही औसत विचलन होता है।

- जल प्रयोग दक्षता में 50 प्रतिशत तक की वृद्धि करता है।
- पैदावार में 40 से 45 प्रतिशत तक की बढ़ोत्तरी की बचत करता है।
- पूरे खेत में पानी की सही से निकास और पानी का स्तर एक समान होने से धान में खरपतवार दवाईयों का ज्यादा असर पोषक तत्वों और उर्वरक का एक समान प्रसार होता है।

*वैज्ञानिक (कृषि अभियांत्रिकी), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, संत कबीर नगर

• सभी तरफ से खेत समतल होने से बुवाई का काम सरलता व तेजी से किया जा सकता है।

• समतल खेत में बीजों का अंकुरण अच्छा होता है जिससे फसल अच्छी होती है।

• पोषक तत्वों व उर्वरक को एक समान खेत में दिया जा सकता है।

• निराई–गुड़ाई के काम में कम समय लगता है जिससे लागत को कम किया जा सकता है।

• बीज, उर्वरक, रसायन और ईंधन की कम खपत की ओर ले जाता है।

• धान की बिजाई की तैयारी जैसे बढ़िया समतल संचालन के लिए उपयोग किया जाता है।

• परिचालन क्षमता में सुधार होता है (ऑपरेटिंग समय को 10 से 15 प्रतिशत तक कम करता है)।

• लेजर नियंत्रित सटीक भूमि समतलन फसल स्थापना में सुधार करने में मदद करता है।

• लगभग 3 से 5 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि क्षेत्र में वृद्धि करना।

• जल–उपयोग क्षमता को 50 प्रतिशत तक बढ़ाना।

• फसल गहनता को 40 प्रतिशत तक बढ़ाना।

• फसलों की उपज में वृद्धि (गेहूं 15 प्रतिशत गन्ना 12 प्रतिशत चावल 61 प्रतिशत और कपास 66 प्रतिशत)।

• सिंचाई के पानी की बचत लगभग 35–45 प्रतिशत।

• खरपतवार समस्याओं को कम करना और खरपतवार नियंत्रण दक्षता में सुधार करना।

विभिन्न प्रकार के लेजर लैंड लेवलर

लेजर लेवलर 4 प्रकार के होते है।

मैनुअल लेजर लैंड लेवलर

लेजर लेवलिंग इंस्टूमेंट के सेटअप के लिए ऑपरेटर को यूनिट के स्क्रू और बबल शीशियों का उपयोग करके यूनिट को मैन्युअल रूप से लेवल करने की आवश्यकता होती है। ये लेजर 100 मीटर पर 1 सेमी की अधिकतम सटीकता प्राप्त कर सकते हैं।

सेमी सेल्फ लेवलिंग लेजर

ये लेजर अपने आप को एक सीमा के भीतर समायोजित कर लेते हैं और 100 मीटर पर कम से कम 1 सेमी की सटीकता प्राप्त कर सकते हैं। वे या तो एक बैल की आंख के साथ एक गोलाकार बुलबुले या इलेक्ट्रॉनिक रोशनी से लैस होते हैं जो हरे रंग में बदल जाते हैं जब आप सीमा तक पहुंचते हैं।

फुल–सेल्फ लेजर लेवलिंग

ये लेजर स्वचालित रूप से एक निर्दिष्ट सीमा के भीतर स्तर को खोजते और बनाए रखते हैं। वे उपयोग करने में सबसे आसान हैं और 100 मीटर पर 2–5 मिमी तक की सटीकता प्राप्त कर सकते हैं.।

स्प्लिट–बीम लेजर

ये लेजर स्तर और साहुल संदर्भ लाइनों दोनों को स्थापित करने के लिए एक साथ क्षितिज और ऊर्धवाधर बीम का उत्सर्जन करते हैं।

लेजर लैंड लेवलर की प्रक्रिया क्या है

लेजर लेवलिंग के लिए सबसे अधिक लागत प्रभावी तरीके से मिट्टी को खेत के उच्च बिंदुओं से निम्न बिंदुओं पर स्थानांतरित करने की आवश्यकता होती है। अधिकतर स्थितियों में खेतों की जुताई करनी होगी और समतलीकरण शुरू होने से पहले खेत सर्वेक्षण करना होता हैं। प्रक्रिया निम्लिखित प्रकार है–

प्रक्रिया–1

खेत की जुताई खेत के केंद्र से बाहर की ओर जुताई करना बेहतर होता है। जब मिट्टी नम हो तो हल करें, क्योंकि अगर इसे जोता जाता है तो खेत सूख जाता है ट्रैक्टर की शक्ति में एक महत्वपूर्ण वृद्धि की आवश्यकता होती है और बड़े आकार के ढेले को छोटा किया जा सकता है। स्क्रपेर से मिट्टी के प्रवाह में सहायता के लिए सतह के अवशेषों को काटें या हटाने की प्रकिया सुनिचित करना चहिये।

प्रक्रिया–2

एक स्थलाकृतिक सर्वेक्षण– आयोजित करना एक बार जब खेत की जुताई हो जाती है, तो खेत में उच्च और निम्न स्थानों को रिकॉर्ड करने के लिए एक स्थलाकृतिक सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। सभी रीडिंग का योग लेकर और ली गई रीडिंग की संख्या से विभाजित करके खेत की औसत ऊंचाई की गणना की जा सकती है। फिर, एक खेत आरेख और खेत की औसत ऊंचाई का उपयोग करके, यह निर्धारित करें कि मिट्टी को उच्च से निम्न क्षेत्रों में प्रभावी ढंग से कैसे स्थानांतरित किया जाए।

प्रक्रिया–3

लेजर नियंत्रित स्क्रेपर को एक ऐसे बिंदु पर रखा जाना चाहिए जो फील्ड की औसत ऊंचाई का दर्शाता हो। जब पूरे क्षेत्र को कवर कर लिया गया हो, तब ट्रैक्टर और बकेट को मैदान के ऊपरी सिरे से निचले सिरे तक अंतिम बार समतल पास करना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए पुनः सर्वेक्षण करना चाहिए कि सटीकता का वांछित स्तर प्राप्त कर लिया गया है।

कद्दूवर्गीय सब्जियों में प्रभावशाली कीट और रोग प्रबंधन

प्रदीप कुमार* एंव प्रदीप कुमार मिश्रा**

कद्दूवर्गीय सब्जियां गर्मी तथा वर्षा के मौसम की महत्वपूर्ण फसलें हैं। यद्यपि कद्दूवर्गीय सब्जियों का उत्पादन अच्छा होता है, परन्तु अधिक नमी और उचित तापमान मिलने के कारण कीट व रोग का प्रकोप अधिक रहता है, बहुत से कीट एवं व्याधियाँ कद्दूवर्गीय सब्जियों के उत्पादन को प्रभावित करते हैं तथा कभी–कभी प्रबंधन के अभाव में पूरी फसल को नष्ट कर देते हैं। अतः इन कीटों व रोगों का उचित समय पर उपयुक्त प्रबंधन करना आवश्यक है। कद्दूवर्गीय सब्जियों की फसलों में लगने वाले कीट व रोग इस प्रकार हैं।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

फल मक्खी : यह मक्खी फलों पर अण्डे देती है तथा बाद में लार्वा फलों में घुसकर उन्हें अन्दर से खाते रहते है। इसकी रोकथाम के लिए खेत की निराई करके प्यूपा को नष्ट कर दें। ग्रसित फलों को भी एकत्रित करके नष्ट कर दें। मक्खियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो इमिडाक्लोप्रिड 1.0 मि.ली. प्रति 3 लीटर तथा 1 प्रतिशत चीनी/गुड़ (10 ग्राम प्रति लीटर) से बनाकर 50 लीटर प्रति हैक्टयेर की दर से छिड़काव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए 10 से 15 फेरोमैन ट्रेप (मिथाइल यूजिनोल) प्रति हैक्टेयर का प्रयोग भी किया जा सकता है। बेलों पर मैलाथियान 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

लाल कद्दू भृंग : यह कीट फसल की प्रारम्भिक अवस्था में पत्तियों को खाता है। वयस्क कीट पत्ते में टेढ़े–मेढ़े छेद करके पौधों की जड़ों, भूमिगत तने व भूमि से सटे फलों को नुकसान पहुंचाते हैं। फसल की अगेती बुवाई से कीट के प्रभाव को कम किया जा सकता है। संतरी रंग के भृंग को सुबह के समय इकट्ठा करके नष्ट कर दें। इनसे बचाव के लिए फसल पर कार्बोसल्फान नामक कीटनाशी का 1.5 से 2.0 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर सुबह के समय छिड़काव करें। भूमिगत शिशुओं को नष्ट करने के लिए क्लारोपायरीफॉस 20 ईसी. 2.5 लीटर प्रति हैक्टेयर हल्की सिंचाई के साथ इस्तेमाल करें और फसल खत्म होने पर बेलों को खेत से हटाकर नष्ट कर दें।

सफेद मक्खी : इस कीट के शिशुओं व वयस्कों द्वारा रस चूसने से पत्ते पीले पड़ जाते हैं। इनके मधुबिन्दु पर काली फफूंद आने से पौधों की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। इसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल.1.0 मिली प्रति 3 लीटर या डायमेथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. प्रति लीटर या कार्बेरिल 50 डब्ल्यूपी 2.0 मिली. प्रति लीटर या स्पिनोसैड 45 स.सी. 1.0 मिली. प्रति 4 लीटर पानी का छिड़काव कर इल्लियों कों नष्ट कर दें। नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या बी. टी. 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

चेंपा : लगभग सभी कद्दूवर्गीय फसलों पर आक्रमण करते हैं। ये पौधों के कोमल पत्तियों व पुष्पकलिकाओं से रस चूसकर फसल को हानि पहुंचाते है। यह कीट वायरस जनित बीमारियों के वाहक का कार्य करती हैं। इसकी रोकथाम के लिए नाइट्रोजन खाद का अधिक प्रयोग न करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. 1.0 मिली. प्रति 3 लीटर या डाइमेथेएट 30 ई.सी. 2.0 मिली. प्रति या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2 मिली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

माईट या बरूथी कीट : इस कीट का प्रकोप मानसून पूर्व गर्म मौसम में प्रायः देखा जाता हैं। बरूथी का आक्रमण पत्तियों की निचली सतह पर होता हैं, जहाँ यह शिराओं के पास अण्डे देती हैं। वयस्क, पत्तियों का रस चूसती हैं तथा अपने चारो और रेशमी चमकीला जाल तैयार कर लेती हैं। बरूथी ग्रस्त पत्तियों की शिराओं के आसपास का क्षेत्र पीले रंग का हो जाता हैं। कीट प्रकोप की तीव्र अवस्था में पत्तियॉ चितकबरी होकर चमकीली पीली हो जाती हैं। पत्ती पर बने जाले पर मिट्टी के कारण जमा हो जाते हैं। इस अवस्था में पौधे से पत्तियों का गिरना शुरू हो जाता हैं।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (फसल सुरक्षा) एवं **विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि वानिकी) कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहना, सिद्धार्थनगर एवं गोण्डा
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एंव प्रोद्यौगिकी विश्वविधालय,कुमारगंज, अयोध्या– 224229

फलस्वरूप कद्दूवर्गीय सब्जियों की वृद्धि एवं उपज दोनों पर विपरीत प्रभाव पड़ता हैं। इस कीट के नियंत्रण के लिए गंधक के चूर्ण या घुलनशील गंधक (0.2) का छिड़काव करना चाहिए। मिथाइल पैराथियान (0.2) या फोसालिन (0.2) का छिड़काव भी प्रभावकारी रहता हैं अथवा टोवासिन 200 मि0ली0 पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिये।

सर्पाकार पर्ण खनक (सुरंगक) कीट : कद्दूवर्गीय सब्जियों तुरई, लोकी, खीरा, करेला आदि फसलों में इस कीट से बहुत अधिक नुकसान होता हैं। कीट की लटें पत्ती की बाहरी त्वचा के नीचे सर्प के आकर की तरह टेढ़ीमेढ़ी सुरंगे बनाती हैं। कीट द्वारा पत्ती पर अंडे देने के 3–4 दिन बाद पतली– पतली सुरंगे बनना प्रारंभ हो जाती हैं। धीरे– धीरे ये सुरंगे चौड़ी होकर पत्ती की पूरी सतह पर फैल जाती हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए किसानो को कीट ग्रस्त पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए। इन कीटों के प्रबंधन के लिए 750 मि.ली. ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 25 ई.सी. या 650 मि.मी. डाईमेथोएट 30 ई.सी. प्रति हैक्टेयर 250 लीटर पानी में फल लगने से पूर्व छिड़काव करना चाहिए।

दीमक : यह सूखे की स्थिति में पौधे की जड़ों तथा तने को काटती हैं। जड़ काटने से पौधें सूख जाते है। नियंत्रण हेतु खड़ी फसल में प्रकोप होने पर क्लोरोपाइरीफॉस 20 ईसी रसायन की 6–6.50 ली0, इमिडाक्लोप्रिड 1.0 लीटर मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से सिंचाई पानी के साथ प्रयोग करें।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

चूर्णिल आसिता : इस रोग के कारण कद्दूवर्गीय सब्जियों की बेलों व पत्तियों पर तथा अधिक प्रकोप होने की स्थित में डण्ठलों व फलों पर सफेद चूर्ण सा जमा हो जाता है। इससे फलों की बढ़वार रुक जाती है, पत्तियाँ सुखना प्रारम्भ हो जाती है। फल भी कमजोर हो जाते है तथा पैदावार कम हो जाती है। यह रोग मुख्य रूप से वायु से एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलता है। रोग के रोकथाम के लिए केराथेन एल.सी. 1.0 एम.एल. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा आवश्यकता पड़ने पर 15–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव को दोहराना चाहिए। इस रोग की रोकथाम सल्फर पाउडर अर्थात गंधक का चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर बुरकाव कर के भी की जा सकती है।

मृदु रोमिल आसिता : यह रोग कोलीटोट्राइम लेजिनेरियम नामक फफूँद से फैलता है। इस रोग के प्रकोप से कद्दूवर्गीय सब्जियों की पत्तियों के नीचे की सतह पर फफूँद सी जमी प्रतीत होती है तथा ऊपरी सतह पर पीले–पीले धब्बे बन जाते है। इस रोग से खीरा, तोरई तथा खरबूजे में अधिक हानि होती है। इस रोग की रोकथाम हेतु अधिक रोगी बेलों को काट कर डायथेन जेड –78 या मेंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 10 दिन के अंतराल से छिड़काव करना चाहिए तथा ब्लाईटॉक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करके भी रोग की रोकथाम की जा सकती है। जहाँ संभव हो रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करना चाहिए।

एन्थ्रेक्नोज या झुलसा रोग : इस रोग से विशेष तोर पर खरबूजा, लौकी व खीरा में अधिक हानि होती है। यह रोग पर्णशिराओं पर धब्बे के रूप में दिखाई देता है जो बाद में बढकर 1.0 सेंटीमीटर व्यास के हो जाते है। इनका रंग भूरा तथा आकार कोणीय होता है। धब्बों के आपस में मिलने से कारण सुख जाती है। अनुकूल वातावरण में यह धब्बे बढकर पौधों के अन्य भागों व फलों पर भी पाए जाते है। यह रोग मुख्य रूप से मृदोढ़ है, परन्तु बीज से भी फैलता है। इस के रोकथाम हेतु बीजों को पारायुक्त रसायन जैसे थीरम 2.0 ग्राम या एग्रोसान जीएन 2–2.5 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करके बोना चाहिए। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 7 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

फल विगलन रोग : यह रोग तोरई, लौकी, करेला, परवल व खीरा में पाया जाता है। प्रभावित फलों पर गहरे धब्बे बन जाते है। ऐसे फल जो मृदा के सम्पर्क में आते हे उन्हें रोग लगने की ज्यादा सम्भावना रहती हैं। भंडारण के समय यदि कोई रोग ग्रस्त फल पहुंच गया हो तो वह स्वस्थ्य फलों को नुकसान पहुँचाता हैं। यह सभी फफूंद मृदाजनित रोग हैं। यदि फल जमीन के

(शेष पृष्ठ 29 पर)

मौसमी फल आम के प्रसंस्करण विधियाँ एवं पौष्टिक महत्व

कंचन* एवं एस. के. तोमर**

आम उत्तर प्रदेश की मुख्य बागवानी फसल है। प्रदेश में लगभग 40—45 लाख माटिक टन आम उत्पादित होता है ,जो देश के उत्पादन का लगभग 83 प्रतिशत है। आम उत्पादन की दृष्टि से उत्तर प्रदेश के बाद आंध्र प्रदेश, बिहार एवम कर्णाटक आम उत्पादन करनेवाला अग्रणी राज्य है। उत्तरप्रदेश में सहारनपुर मेरठ, मुरादाबाद, बनारसी, लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सुल्तानपुर जनपद आम फल पट्टी क्षेत्र घोषित है,

जहाँ पर दशहरी, लंगड़ा, लखनउ सफेदा , चौसा , बाम्बेग्रीन रतोला, फजली, रामकेला, गौरजीत, सिंदूरी आदि किस्मो का उत्पादन किया जाता है। पूर्वी उत्तरप्रदेश में विभिन्न किस्मो की खेती होती है।

किस्में — दशहरी , दशहरी—५१, लंगड़ा, चौसा, लखनऊ सफेदा, गौर्जीत, आम्रपाली, अम्बिका, सी. आई. एस. अचएम,—1, मल्लिका, अरुनिमा

मिठास से भरा रसीला आम खाने में स्वादिष्ट होने के साथ साथ सेहत के लिये फायदेमन्द होता है . स्वाद के साथ फायदों की खान है आम इसे खाने से मिलते हैं यह फायदे।

कैंसर से बचाव

आम में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट कोलोन, कैंसर, ल्यूकेमिया और प्रोस्टेड कैंसर से बचाव में फायदेमंद है। इसमें क्यूसैंटिन, एस्ट्रागालिन और फिसेटिन जैसे कई तत्व है जो कैंसर से बचाव करने में मददगार होते हैं।

रतौंधी से मिलती है राहत

आम में विटामिन भरपूर होता है, जो आंखों के लिए वरदान है। इससे आंखों की रोशनी बनी रहती है।

कोलेस्ट्रोल नियमित रखता है

आम में फाइबर और विटामिन सी खूब होता है। इसमें बैड कोलेस्ट्राल संतुलित बनाने में मदद मिलती है।

पाचन क्रिया को ठीक रखता है

आम में ऐसे कई एंजाइम्स होते हैं जो प्रोटीन को तोड़ने का काम करते हैं। इससे भोजन जल्दी पच जाता है साथ ही इस में उपस्थित साइट्रिक एसिड, टारटरीक एसिड शरीर के भीतर छारीय तत्वों को संतुलित बनाए रखता है।

मोटापा कम करता है

मोटापा कम करने के लिए भी आम सहायक है। आम की गुठली में मौजूद रेशे शरीर की अतिरिक्त चर्बी को कम करने में बहुत फायदेमंद होते हैं। आम खाने के बाद भूख कम लगती है, जिससे ओवर ईटिंग का खतरा कम हो जाता है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है

आम खाने से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी इजाफा होता है।

स्मरण शक्ति में मददगार

जिन लोगों को भूलने की बीमारी हो उन्हें आम का सेवन करना चाहिए। इसमें पाया जाने वाला ग्लूटामिक एसिड नामक एक स्मरण शक्ति को बढ़ाने में उत्प्रेरक की तरह काम करता है। साथ ही इससे रक्त कोशिकाएं भी सक्रिय होती हैं, इसीलिए गर्भवती महिलाओं एवम एनमिक व्यक्तियों को आम खाने की सलाह दी जाती है।

आम खाने में पौष्टिक भी है इसमें फाइबर, पोटेशियम, मैग्नीशियम, विटामिन और मिनरल्स से भरपूर आम का सेवन ब्लड प्रेशर से लेकर पेट की बीमारियों को दूर रखने में मदद करता है। एक कप आम में 11 किलोग्राम कैलोरी, दशमलव 6 फैट, ग्राम 0 प्रतिशत कंट्रोल, 11.7 मिलीग्राम सोडियम, 227.2 मिलीग्राम पोटैशियम, 25 ग्राम कार्बोहाइड्रेट 2.6 ग्रामडाइटरी फाइबर 2.3 ग्राम शुगर 1.4 ग्राम प्रोटीन ३५ प्रतिशत विटामिन बी 61 प्रतिशत कैल्शियम 1 प्रतिशत आयोजन और 4 प्रतिशत मैग्नीशियम होता है।

आम का स्वाद के मामले में अपना ही महत्व है आम

*गृह वैज्ञानिक, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र बेलीपार, गोरखपुर

चाहे कच्चा हो या पक्का इससे अनेक तरह के खाद्य उत्पाद बनाए जाते हैं। चाहे सूखी खटाई हो, चटनी या कच्चे आम का पना हो या मैंगो शेक या जूस, मुरब्बा, अचार यानी अन्य चीजें आम से बनाई जाती है

यहां बहुत ही सरल तरीके से पके हुए आम का मुरब्बा बनाने के बारे में बता रहे हैं इसे लंबे समय तक रख सकते हैं और मौसम में भी आम का मजा ले सकते हैं। भारत में उत्पादित आम पूरे विश्व के बाजार में भेजा जाता है। आज भी हमारे देश में कई राज्यों के किसान आम को अपने रोजगार का प्रमुख पात्र मानते हैं। भारत देश विश्व के आम बाजार में करीब 60 प्रतिशत का अकेले उत्पादकारी है।

पके आम का जैम

पकी हुए दशहरी या कम रेशे वाले

आम 1 किलोग्राम

पीला रंग इच्छा अनुसार

साइट्रिक एसिड 8 से 10 बूंदे

चीनी 600 ग्राम

पानी 1 चम्मच

विधि आम को छीलकर बारीक टुकड़ों में काट लें। थोड़ा पानी डालकर उसे अलग पकाएं) जब आम के टुकड़े गल जाए, तो उन्हें अच्छी तरह मसल कर चिकना होता तैयार कर ले। चीनी डालें और पकाएं) जब यह काफी गाढ़ा हो जाए और चमक आ जाए तब उसमें 8 से 0 बूंदे साइट्रिक एसिड डाल दें। यदि रंग की जरूरत हो तो डाले और अच्छी तरह पकाकर उतार लें।

नोट जैंम जब तैयार हो जाए. एक कटोरी में आधा चम्मच जैम डालें उसके ऊपर पानी की दो बंदे डार्ले अगर जैम फैल जाता है तो और पकाने की जरूरत है यदि वह नहीं फैलता तो समझें जैम हो गया है और गरमा गरम ही कांच के बर्तन में निकाल दें।

पके आम का मुरब्बा

आम 2 किलोग्राम

चीनी 2 किलोग्राम

पानी जरूरत के मुताबिक

काली मिर्च 5 ग्राम

छोटी इलायची 10 ग्राम

विधि आम को छीलकर उनके टकड़े कर ले और गुठली सेटिंग फेंक दे। अभी स्टील के बर्तन मेंचीनी और पानी डालकर आग पर एक तार की चाशनी तैयार करें। आम के टुकड़े चासनी में डालें तीन से चार उबाल आने पर नीचे उतारे। ठंडा होने पर इलायची पीस कर डालें। इसे ठंडा होने पर मर्तबान में भरकर रखें।

गर्मी के मौसम में गर्म हवाओं के चलने के कारण लू का खतरा बढ़ जाता है। आम का सेवन शरीर में पानी की कमी को पूरा करने की समस्या से बचाता है। लू से बचने के लिये आप अपनी डाइट में आम पन्ना को शामिल करें।

आम का पन्ना

विधि कुल समय 45 मिनट तैयारी का समय 5मिनट पकने का समय 40 मिनट सर्विंग

सामग्री कच्चे आम दो

ब्राउन शुगर 3 टी स्पून (भ्री शक्कर इक्ष– शक्कर कण –भूरी शक्कर बड़े साफ़ पारदर्शी कण होते है जिसमे थोड़ी नमी रहती है) कर नमक 2 टी स्पून

जीरा पाउडर 1 टीस्पून

पानी 2 कपुदीने के पत्ते 4 टीस्पून

क्रष्ड (पीसी हुई)आइस

एक टी स्पून में पानी ले उसमें आम डालकर उबालें। 10मिनट तक धीमी आंच पर तब तक पकाएं जब तक कि वह नरम ना हो जाए) जब आम ठंडा हो जाए तो उन्हें एक चम्मच की मदद से छीन ले। आम की सही मात्रा के साथ आम के गूदे के मिक्सी में डालकर गाढ़ा पेस्ट तैयार कर लें। इस पेस्ट को पैन में निकाल ले और ब्राउन शुगर डालें। इसे आग पर पकाएं जब तक चीनी पूरी तरह घुल ना जाए। इसे लगातार चलाते रहें वरना यह जल सकता है। जब शुगर पूरी तरह घुल जाए, पैन को आंच से उतार लें और इसमें जीरा पाउडर, काला नमक, नमक मिलाएं।

ड्रिंक बनाने के लिए

एक लंबे गिलास में एक या दो चम्मच आम का

मिक्सचर ले और ठंडा पानी डालें, इसे अच्छी तरह से मिक्स कर ले। पुदीने के पत्ते से गर्नीस (सजाने) करने के बाद सर्व करें।

तकनीकी

आम का मुरब्बा या जैम बनाने के लिए चीनी लगभग 60से 70 प्रतिशत के बीच होना चाहिए। यदि चीनी 60 प्रतिशम से कम होता है तो जैम में चीनी क्रिस्टलाइज हो जाता है और जैम तैयार नहीं हो पाता। जैम को लंबे समय तक संरक्षित रखने के लिए तथा स्वाद एवं रंग बरकरार रखने के लिए साइट्रिक एसिड का प्रयोग करें।

अचार बनाने के लिए कच्चे आम या सब्जियों की कतलियौं को लवण जल में प्रयोग कर दीर्घकालिक संरक्षण किया जा सकता है। किण्वन के जरिए फलों और सब्जियों का संरक्षण और अचार बनाना काफी प्राचीन विधियां हैं जो पूरी दनिया में अपनाया जाता है भारत में अचार वाणिज्य स्तर पर बनाया जाता है और हाल ही के वर्षों में यह एक प्रमख के खाद्यउद्योग के रूप में उभर कर आया है जितने भी प्रकार के अचार बनाए जाते हैं उनमें आम के अचार की घरेलू तथा अंतरराष्ट्रीय दोनों बाजार में काफी मांग होती है। सामान्यता अचार कच्ची या अपरिपक्व आम के छिलकों के साथ यह उनके बिना बनाया जाता है और उन में अनेक प्रकार के फ्लेवर स्वाद और गुणवत्ता के लिए नमक तथा अनेक प्रकार के मसालों का इस्तेमाल किया जाता है। आम के उत्पादन के लिए अम्लीय और रेशेयुक्त आम में ज्यादा अच्छी होती है। इसलिए इन कच्चे आमों को पूरे वर्ष के दौरान टुकड़ों में सूखा नमक मिलाकर भंडारित किया जाता है। इस विधि के अचार के रंग, टेक्सचर, सूक्ष्म जीवाणु की हानि आमतौर पर पाई जाती है। इन समस्याओं के लिए भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान ब्रिनिंग विकसित की गई है। इस विधि के तहत कच्चे जे हिसार घाटा बेंगलुरु में एक ब्रिनिंग प्रिजर्वेशन विधि सब्जियों च्चे आम को 13 से 16 प्रतिशत लवण जल में संरक्षित रख सकते है एवं सब्जियों को 2 से 2.5 प्रतिशत लवण जल में संरक्षित रख सकते है

आम का अचार

आम 1 किलो

नमक 226 ग्राम

मेथी 113 ग्राम मोत्ता पिसा हुआ

कलोंजी 28 ग्राम

हल्दी 28 ग्राम

लाल मिर्च पाउडर 28 ग्राम

काली मिर्च 28 ग्राम

सौफ 28 ग्राम

आम को धो कर पानी में भिगो दीजिए पानी से निकालने के बाद मशीन या चाकू से चार भाग में काट लीजिये. (2 प्रतिशत नमक का ब्राइन सलूशन बना लेजीय–2 कटे आम को ब्राइन में डाल कर एक दिन के लिए रख दिजिए या नमक के पाउडर में मिक्स कर के रात भर के लिए रख दीजिए अगले दिन उसमे सारे मसाले मिक्स कर दीजिये ऊपर से थोड़ा सरसों का तेल गरम कर के ठंडा कर के डाल दीजियें।

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रु0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

पशुओं के लिए संतुलित आहार की उपयोगिता

सुरेन्द्र सिंह* एवं आर. के. आनन्द**

पशुओं की पोषण आवश्यकतायें:—

पशुओं को पानी, कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, वसा, विटामिन्स तथा खनिज पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पशु के शरीर में कुल वजन का लगभग 55 से 75 प्रतिशत पानी, 15—16 प्रतिशत प्रोटीन 3—30 प्रतिशत तक वसा तथा 2—5 प्रतिशत तक खनिज लवण पाया जाता है। इसलिए पानी एक बहुत ही महत्वपूर्ण एवं आवश्यक पोषक तत्व है। पशु को पर्याप्त मात्रा में ताजा, साफ—सुथरा पानी अवश्य प्रदान करना चाहिए।

कार्बोहाइड्रेट्स एवं वसा शरीर को ऊर्जा प्रदान करते है। वृद्धि, जनन, दुग्ध उत्पादन एवं पशु के जीवन के लिए ऊर्जा आवश्यक होती है। ऊर्जा के साथ—साथ पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन भी आहार में अवश्य होना चाहिए। ऊर्जा व प्रोटीन की कमी होने पर पशु का उत्पादन एवं स्वास्थ्य तुरन्त प्रभावित होता है। आहार में ऊर्जा एवं प्रोटीन बहुत ही महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। इनके पोषण पर पर्याप्त ध्यान देना आवश्यक होता है।

विटामिन्स दो प्राकर की होती है। वसा में घुलनशील विटामिन्स में ए, डी, ई तथा के टाइप की विटामिन्स होती है। हरे चारे में बीटाकैरोटीन पाया जाता है जो पशु के शरीर में विटामिन—ए में परिवर्तित हो जाता है। विटामिन—ई भी हरे चारे में पायी जाती है। विटामिन—डी की सामान्यतया पशु को कमी नहीं होती है क्योंकि सूर्य की रोशनी में त्वचा में उपस्थित रसायन विटामिन—डी में परिवर्तित हो जाता है। पानी में घुलनशील विटामिन की सामान्यतया रोमान्थी पशुओं को कमी नहीं होती है क्योंकि उनका संश्लेषण पशु के शरीर में हो जाता है।

पशुओं को निरोगी व उत्पादनशील रखने के लिए उनके आहार में खनिज लवण जैसे— कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटैशियम, क्लोरीन, लोहा, ताँबा, कोबाल्ट, आयोडीन, मैग्नीज, जिंक, सेलेनियम तथा फ्लोरीन की आवश्यकता होती है। खनिज तत्वों की पूर्ति करने के लिए खनिज मिश्रण पशु को प्रदान करना आवश्यक होता है। चारे एवं दाने से ही पशु को समस्त पोषक तत्वों की आपूर्ति होती है जो पोषक तत्व चारे एवं दाने में कम होते है पशु को उसकी कमी होने लगती है तथा इससे पशु का उत्पादन, जनन, वृद्धिदर इत्यादि प्रभावित होने लगते है।

संतुलित पशु आहार:—

वह आहार जिसमें जीवन निर्वाह, अपेक्षित उत्पादन व स्वास्थ्य हेतु सभी आवश्यक पोषक तत्व (प्रोटीन, ऊर्जा, खनिज लवण एवं विटामिन आदि) समुचित मात्रा में मौजूद हों संतुलित पशु आहार कहलाता है। गाय को अपने जीवन निर्वाह, शारीरिक क्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने अथवा दूध को बढ़ाने के लिए सभी पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जोकि किसी एक चारे, भूसे या दाने से पूरी नही की जा सकती है और न ही सभी पोषक तत्व किसी एक दाने, खली आदि में समुचित मात्रा में मौजूद होते है। संतुलित व पौष्टिक बनाने के लिए पशु आहार में दाने (मक्का, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा आदि), खली (सरसों की खली, मूँगफली की खली, कपास की खली) व चूनी, चूरी, कनकी, राईस पालिस, चोकर इत्यादि को समुचित मात्रा में मिलाना आवश्यक होता है। यह आहार संतुलित एवं पौष्टिक होने के साथ—साथ सस्ता भी पड़ता है। इसमें अलग से प्रति क्विंटल 2 किलोग्राम खनिज लवण, 1 किलोग्राम नमक व 20 ग्राम विटामिन्स प्रीमिक्स मिलाना आवश्यक होता है। संतुलित आहार तैयार करते समय यह ध्यान देना आवश्यक है कि उस आहार में प्रोटीन लगभग 16 प्रतिशत व कुल पाचक तत्व 60—70 प्रतिशत, खनिज लवण 2 प्रतिशत व नमक 1 प्रतिशत अवश्य होना चाहिए। यह संतुलित आहार गायों को उनकी आवश्यकतानुसार चारे या भूसे में मिलाकर खिलाना अधिक लाभदायक होता है।

संतुलित व पौष्टिक आहार से लाभ:—

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान) एवं **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, कठौरा, अमेठी,

1. पशुओं को सभी पोषक तत्व आवश्यकतानुसार संतुलित मात्रा में उपलब्ध कराता है।

2. पशु की दुग्ध उत्पादन क्षमता को लगभग 25–30 प्रतिशत बढ़ाता है एवं लम्बे समय तक दूध देने की क्षमता बनाये रखता है।

3. पशुओं को कुपोषण से बचाता है व पशु का गर्मी में न आना, बार–बार फिरना, गर्भ न ठहरना आदि समस्याओं से छुटकारा दिलाने में मदद करता है।

4. पशुओं के दो ब्याँतों के अन्तर को कम करता है।

5. पशुपालक को पशुपालन से होने वाली आमदनी को बढ़ाता है।

6. पशु को स्वस्थ तन्दुरूस्त एवं अधिक लाभदायी बनाता है तथा अपच , भूख में कमी, कमजोरी आदि समस्याओं से भी राहत दिलाता है।

पशुओं को आहार खिलाना :–

पषुओं को आहार खिलाते समय या आहार का निर्धारण करते समय निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए:–

- पशुओं को जो भी आहार दिया जाय वह स्वच्छ, संतुलित, स्वादिष्ट, सुपाच्य, पौष्टिक तथा सस्ता होना चाहिए। पौष्टिक तत्व में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण, जल एवं विटामिन्स आते हैं जिनकी आहार में पर्याप्त मात्रा होनी आवश्यक है।

- पशुओं की आवश्यकतानुसार आहार का निर्धारण करना चाहिए।

- पशु को नित्य नियमित समय पर निश्चित मात्रा में आहार देना चाहिए। दो आहार के बीच में कम से कम 8 घंटे का अन्तर होना चाहिए तथा नांद में थोड़ा–थोड़ा कई बार में आवश्यकतानुसार चारा डालना चाहिए।

- पशु की खुराक में भूसा, हरा चारा तथा दाने का मिश्रण शामिल होना चाहिए जिससे उनकी आवश्यकतानुसार सभी पोषक तत्व उपलब्ध हो सके।

- आहार को रूचिकर बनाने के लिए चारे को काटकर तथा दाने को भिगोकर खिलाना चाहिए। इससे आहार की पचनीयता एवं पशुओ को पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है।

- राशन में एकाएक परिवर्तन न करके धीरे–धीरे बदलना चाहिए जिससे कि पशुओं की भोजन प्रणाली पर कुप्रभाव न पड़े।

- हरा चारा रसीला तथा अच्छे पोषक तत्व वाला होना चाहिए। हरे चारे की कटाई पुष्पावस्था में करनी चाहिए क्योंकि इस समय समस्त पोषक तत्व अधिक मात्रा में मौजूद रहते हैं।

- प्रोटीन की पूर्ति के लिए दो दाल वाली हरे चारे की फसल का चुनाव अवश्य करना चाहिए इसमे बरसीम, लूर्सन व लोबिया मुख्य है। एक दाल वाली हरे चारे के साथ लोबिया अवश्य मिलाकर बोनी चाहिए।

- हरा चारा इस प्रकार का होना चाहिए जोकि कम क्षेत्रफल में अधिक से अधिक पौष्टिक उत्पादन दे सके। इस कार्य के लिए कई कटाई (मल्टीकट) वाली हरे चारे की फसल का चुनाव करना चाहिए।

- आहार ताजा एवं अच्छा होना चाहिए। ताजे हरे चारे में विटामिन ए सबसे अधिक पाया जाता है। बासी एवं सड़े हुए चारे हानिकारक होते हैं।

- जब सूखा पड़ जाता है तब ज्वार एवं बाजरा आदि में हाइड्रोसाइनिक अम्ल अधिक मात्रा में पायी जाती है इसको खाने से पशु की मृत्यु हो जाती है।

- राशन देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पशु की नांद साफ हो। इस कार्य के लिए पशु की नांद प्रतिदिन साफ पानी से धुलनी चाहिए।

- दुग्ध उत्पादन हेतु गाय एवं भैंस को क्रमशः 3.0 किग्रा एवं 2.5 किग्रा दूध पर 1 किग्रा तथा जीवन निर्वाह के लिए 1–1.5 किग्रा. दाने का मिश्रण देना चाहिए।

- स्थानीय संसाधनों से दाने का मिश्रण बनाते समय मक्का/गेंहू/जौ का दलिया 40 भाग, दलहन की चूनी 25 भाग, गेहूँ का चोकर 20 भाग एवं सरसों/तिल/अलसी की खली 15 भाग मिलाकर बनाना चाहिए।

- प्रत्येक पशु को 30 से 50 ग्राम नमक तथा 30 से 50 ग्राम खनिज मिश्रण दाने में मिलाकर प्रतिदिन देना चाहिए।

- पशु के आहार में कम से कम 5 से 10 किग्रा0 हरा चारा प्रतिदिन प्रति पशु अवश्य देना चाहिए क्योंकि इससे विटामिन्स के साथ–साथ पानी की पूर्ति काफी हद तक हो जाती है।
- हरे तथा सूखे चारे में लगभग 3:1 का अनुपात होना चाहिए।
- जब पशु के आहार में बरसीम या लूसर्न या लोबिया हरा चारा खिलाया जा रहा है तो उस समय दाने की मात्रा कम की जा सकती है क्योंकि बरसीम अधिक पौष्टिक होने के कारण कुछ हद तक दाने की पूर्ति कर देती है।
- पशु पालकों को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि पशु आहार सस्ता एवं संतुलित हो।
- पशुओं को हमेशा स्वच्छ ताजा जल आवश्यकतानुसार दो–तीन बार पिलाना चाहिए।

इस प्रकार दुधारू पशुओं को संतुलित आहार खिलाने से उनके दुग्ध उत्पादन में बढ़ोत्तरी के साथ ही साथ पशुओं की प्रजनन क्षमता भी बढ़ती है, बीमारियों से लड़ने की क्षमता पैदा होती है एवं मृत्यु दर में कमी आती है। अगर पशुओं को संतुलित आहार निर्धारित आवश्यकतानुसार नही मिले तो उन्नत गाय से अपेक्षित उत्पादन सम्भव नही होगा जिससे पशुपालक की आमदनी में कमी होगी व उन्हे निराशा ही हाथ लगती है। इसलिए पशुपालन में संतुलित आहार का पूरा–पूरा ध्यान रखने के साथ ही पशुओं को समुचित मात्रा में तथा निश्चित समय पर खिलाकर वांछित लाभ प्राप्त

(पृष्ठ 23 का शेष)

सम्पर्क में न आयें तो फल कम रोग ग्रस्त होता हैं। इसके लिए भूमि पर बेलों एवं फलों के नीचे पुआल व सरकंडे बिछा देने चाहिए। हेक्साकोनाजोल 5: एस0सी0 2 मि0ली0 पानी मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

मोजेक रोग : मोजेक रोग के लक्षण पौधों के सभी बाहरी भागो पर पाए जाते हैं। पत्तियों पर हरे व पीले धब्बे बनते हैं। रोगग्रस्त पत्तियाँ विकृत, झुर्रीदार, छोटी व कभी– कभी नीचे की तरफ मुड़ी हुई होती हैं। इनकी शिराओं का हरा या पीला पड़ना इसका सामान्य लक्षण हैं। रोग का असर फलों पर भी पड़ता हैं जो चितकबरे व विकृत होते हैं। कभी– कभी उनका रंग सफेद हो जाता हैं व टेड़े– मेढ़े हो जाते हैं। खेत में रोग प्रसार सफेद मक्खी तथा माहु से फैलता है। इसकी रोकथाम के लिए रोगग्रस्त पौधों को तुरंत नष्ट कर देना चाहिए। रोग का प्रसार रोकने के लिए डाइमेथोएट 1.0 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव 15 दिन के अंतर पर अथवा इमिडाक्लोप्रिड 3–4 मिली. 15 लीटर पानी के घोल के सप्ताह में दो बार छिड़काव से रोग के प्रसार को रोका जा सकता हैं।

जड़ ग्रन्थि रोग : यह रोग मेलाइडोगाइन जवनिका, मेलाइडोगाइन कन्कग्रिटा और मेलाइडोगाइन आरिनेरिया सूत्रकृमि से होता हैं। लगातार एक ही खेत में कद्दूवर्गीय सब्जियों को लेते रहने से इनका विस्तार अधिक होता हैं। इससे पौधों की पत्तियाँ पीली पड़कर झुलसने लगती हैं, तने का रंग पीला पड़ने लगता हैं। जड़ो पर छोटी– छोटी गांठे पड़ जाती हैं जिससे अध्कि प्रभावित होने पर गाठें तनो पर भी दिखाई पडने लगती हैं।

फसल की पैदावार पर बहुत प्रभाव पड़ता हैं। रोकथाम के लिए उचित फसल चक्र अपनाकर सूत्रकृमियों को नष्ट किया जा सकता हैं फसल रोपाई करने वाले खेत में 1.5 किलोग्राम कार्बोफ्यूरान सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में डालकर बुवाई करनी चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर उसे सूर्य का ताप लगाने के लिए छोड़ देना चाहिए इससे सूत्रकृमि के अण्डे, लार्वा, मादा आदि नष्ट हो जाएंगे जिससे इनका प्रकोप कम हो जाएगा। सूत्रकृमियों की रोकथाम हेतु भूमि की बुवाई करने से पूर्व अच्छी पकी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट 150–200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए सब्जी की पौध तैयार करने के लिए नर्सरी में बुवाई पूर्व नेमागॉन या कार्बोफ्यूरान 12 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से नीचे कतारों में डाल देना चाहिए ताकि आरंभ में जड़ ग्रंथि रोग को पनपने से रोका जा सके।

मई माह में किसान भाई क्या करें

मृदा एवं उर्वरक प्रबंध
आर.आर. सिंह, मृदा विज्ञान

(1) ऊसर भूमि के सुधार का कार्यक्रम इस माह में प्रारंभ करें। सका यदि खेत में रहे हों तो खुरच कर हटा दें। तदोपरांत जुताई कर खेत को समतल करें। ढाल के अनुसार मेडबंदी सिंचाई नाली व जल निकास नाली का निर्माण करें तथा जल निकास नाली को तालाब, नदी या अन्य जल स्रोत से संबद्ध कर दें। जिप्सम के प्रयोग करने के लिये जी0आर0 वैल्यू के अनुसार सार जिप्सम को जुताई कर खेत में मिलाकर तुरंत पानी भरकर लीचिंग कार्य कराया जाय। इसमें कम से कम 3 दिन तक पानी भरकर लीचिंग करायें। तदोपरांत जल को जल निकास नाली द्वारा बाहर कर दें। पायराइट को मिट्टी में मिलाने के बाद आक्सीजन के लिये हल्की नमी के साथ छोड़ देते हैं। दूसरे दिन जब मिट्टी का रंग हो जाये तो लीचिंग क्रिया जिप्सम की ही भांति करते हैं।

(2) सनई, ढैंचा, ग्वार, लोबिया, उर्द एवं मूंग सुनिश्चित सिंचाई वाले खाली खेतों में मई माह में बुवाई के उपरांत फूल आने के पूर्व वानस्पतिक वृद्धि काल 40–45 दिन में मिट्टी में पलट कर जुताई द्वारा खेत में दबाकर हरी खाद के रूप में प्रयोग करने के लिये इस माह में बुवाई करें। इसी समय धान की नर्सरी के खेत को तैयारकर पल्टाई से 20–25 दिन पूर्व नर्सरी अवश्य डाल दें। पल्टाई के तुरंत बाद लेव लगाकर 24–48 घंटे के भीतर पाटा देकर धान की रोपाई करायें। धान की रोपाई के समय नत्रजन की संस्तुत आधी मात्रा अवश्य डालें अन्यथा फसल की बढ़वार एवं नत्रजन की कमी होगी जो सड़न में उपयोग हो जाती है।

फसलो में
सौरभ वर्मा विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य)

(1) जल भराव वाले क्षेत्रों के लिये जहाँ कम से कम एक माह तक पानी भरा रहता है, 45–50 सेमी तक के गहराई के लिये धान की मत 50–100 सेमी गहराई के लिये चकिया 59, 400 सेमी से अधिक गहराई लिये जलमग्न तथा नदियों के किनारे वाले क्षेत्रों में जहाँ पानी एक सप्ताह तक भरने के बाद बाढ़ समाप्त होने पर निकल जाता है सुकरधान की किस्म का चुनाव करें। इन प्रजातियों की सीधी बुआई हेतु 400–20 किग्रा0 एवं रोपाई के लिये 35–40 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। बीज की बोआई से पहले स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 4 ग्राम, पारायुक्त रसायन 3 प्रतिशत 5 ग्राम अथवा 6 प्रतिशत का 19 ग्राम को 45 लीटर यानी में घोलकर 25 किग्रा0 बीज को 2 घण्टे तक भिगोयें। बीज को बोने से पूर्व छायादार स्थान में सुखा लें।

(2)सिंचित धान, जिसकी रोपाई जून जाती हैं, चयनित प्रजातियों की नर्सरी उपरोक्त तरीके से उपचारित करने के बाद ही डालें।

(3) गन्ना की शरदकालीन,/बसन्तकालीन एवं पेड़ी की फसल में मई के अन्त तक बची हुई नत्रजन की मात्रा की टाप ड्रेसिंग सिचाई के बाद करें तथा 15–20 दिन के अन्तर पर सिंचाई आवश्यकतानुसार करते रहे।

सब्जी एवं उद्यान में
अश्वनी कुमार सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान)

(1) दाल, फली, जड़, पत्ती, लता एवं कन्द वाली सब्जियों की बोआई यदि अप्रैल माह में नहीं कर पायें हो तो इस माह में अवश्य कर लें।

(2) खरीफ वाली प्याज की बेरन 8–10 किग्रा0 बीज प्रति हेक्टेयर की दर से माह के अन्त में डालें। बेरन के लिये 5 मीटर लम्बी एक मीटर चौड़ी 15 सेमी0 ऊँची क्यारी बनायें। जल निकास हेतु नाली बनाना न भूलें।

(3) बरसात रोपण हेतु लगे बाग के खेत की तैयारी, रेखांकन एवं गड्ढों की खुदाई का कार्य करें।

(4) जिस बाग में आम, अमरूद, अंगूर, लीची कटहल, पपीता इत्यादि के फल लगे हों, उसमें 7–10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहें।

(5) आम, अंगूर, पपीता, केला इत्यादि में पोटाश की शेष मात्रा का प्रयोग अवश्य कर दें।

पौध संरक्षण में
वी.पी. चौधरी एवं पंकज कुमार
विषय वस्तु विशेषज्ञ (फसल सुरक्षा)

(1) मक्का में कीट नियंत्रण इन्डोक्साकार्ब 14.5 ए.सी की मिली0 मात्रा 2 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(2) उर्द, मूंग में पीला चित्र वर्ण कहो रोग से बचाव के लिये फास्फेमिडान 85 ई.सी. 250 मिली0 या

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

मिथाइलडिमेटान 25 ई.सी.। लीटर की दर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर 10–15 दिन के अन्तराल पर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(3) कद्दूकुल की सब्जियों में बुकनी रोग का नियन्त्रण कैराथेन 1 लीटर या 3 किग्रा0 घुलनशील गंधक 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(4) अमरूद में फल आ रहे होगें इनको समाप्त करने हेतु 50 प्रतिशत वृद्धि फूल सहित शाखाओं को काटकर निकाल दें अथवा 125 पी.पी.एम., एन.ए.ए. या 1000 पी.पी.एम. इथरेल का दूसरा छिड़काव अवश्य कर दें।

पशुपालन में

सुरेन्द्र सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

(1) दुधारू पशुओं को तेज लू तथा गर्मी से बचाने के लिये पशुशाला की खिड़कियो पर टाट या बोर के पर्दे लगाकर पानी का छिड़काव करें।

(2) दुधारू पशुओं को ग्रीष्मकाल में गेहूँ का पहले साफ पानी में अच्छी तरह से ता जिला से के बाद छानकर खिलायें।

(3) दुधारू पशुओं को गर्मी से बचाव हेतु दो से तीन बार नहलायें तथा पीने के लिये ताजा एवं स्वच्छ पानी थोड़े अन्तराल पर दें।

(4) दुधारू पशुओं तथा भेड़, बकरियों को परजीवीनाशक दवा अवश्य पिलायें।

(5) जिन पशुओं को अभी तक गला घोंटू बीमारी से बचाव हेतु टीका न लगा हो उन्हें इस माह के अंत तक टीका लगवा दें।

(6) अण्डा तथा मांस उत्पादन कम न हो इसके लिये मुर्गी बाड़े की खिडकियों पर बोरे के पर्दे लगाकर पानी का छिडकाव करते रहना चाहिये, जिससे मुर्गियों को अधिक गर्मी लू से बचाव किया जा सके।

(7) पीने के लिये स्वच्छ व ताजा पानी दिया–जाय तथा पानी के बर्तनों की संख्या बढा दी जाय।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्नः बेर की कटाई–छंटाई कब करनी चाहिए?

(श्री सुरेन्द्र सिंह, मांझगांव, अयोध्या)

उत्तरः बेर के फूल नयी शाखाओं पर आते हैं। जितनी अधिक नयी शाखाएं निकलेगीं उतने ही अधिक फल आयेंगे, जिससे फलत अच्छी होती है। कटाई–छंटाई का उचित समय मई का महीना होता है जब पौधा सुशुप्ता अवस्था में होता है।

प्रश्नः ऊसर में कौन–कौन सी फसल ली जा सकती है और कब–कब तथा किन–किन समयों में?

(श्री लवकुश यादव, खण्डासा, अयोध्या)

उत्तरः ऊसर भूमि में उपयुक्त सुधार को जैसे जिप्सम अथवा पाइराइट मई–जून में प्रयुक्त करने के उपरांत जुलाई में धान की रोपाई करनी चाहिये। धान कटने के बाद रबी में जौ अथवा गेहूं कर फसल उगानी चाहिये। ऐसे खेतों को प्रायः किसान भाई गर्मी में खाली छोड देते हैं जिनसे हानिकारक लवण पुनः जमीन के सतह पर आकर जमा हो जाते है। अतः यह अति आवश्यक है कि गर्मी में भी कोई न कोई फसल ली जाय। इसके लिये ढैंचा (हरी खाद) सर्वोत्तम मानी गई है। इस प्रकार तीन वर्ष लगातार धान–जौ / गेहूं–ढैंचा (हरी खाद) क्रम अपनाना चाहिये।

प्रश्नः दुघारू पशुओं में किलनी की समस्या कैसे दूर करें ?

(श्री रामवरन मौर्या, घोड़वल, अयोध्या)

उत्तरः दुघारू पशुओं के साथ–साथ अन्य सभी पशुओं में किलनी की समस्या पशुशाला की अच्छी व्यवस्था न होने पर होती है, इसलिए जहाँ पर पशु रखें वहाँ पूर्ण रूप से सफाई करके कीटनाशक दवा का छिड़काव बीच–बीच में करते रहें, साथ ही किलनी को समाप्त करने के लिए 2–3 मिली 10 ब्यूटाक्स दवा 2 लीटर पानी में डालकर साफ कपड़े को उसी में भिगोकर पशु के पूरे शरीर पर लगायें। लगाने के आधे घण्टे बाद साफ पानी से नहला दें, सभी किलनी मरकर समाप्त हो जायेगीं।

प्रश्नः गर्मी में अण्डे देने वाली मुर्गियां अण्डे का उत्पादन कम क्यों कर देती हैं। उपाय बतायें?

(श्री रज्जन, गोपालपुर, अमेठी)

उत्तरः अण्डा उत्पादन करने वाली मुर्गियाँ अधिक गर्मी पड़ने के कारण अण्डे का उत्पादन कम कर देती हैं। उत्पादन बनाये रखने के लिये कुक्कुट गृह का तापमान 55 डिग्री फारेनहाइट रखना आवश्यक होता है। इसके लिये कुक्कुट गृह के पास छायेदार वृक्ष आदि लगाना चाहिये तथा लू आदि से बचाव के लिये खिड़कियों पर बोरे के पर्दे लगाकर पानी का छिड़काव किया जाय। साथ ही अधिक गर्मी पड़ने के कारण आहार की खपत कम हो जाती है जिससे उन्हें प्रोटीन की पूरी मात्रा उपलब्ध नहीं हो पाती। इसके लिये अधिक प्रोटीन युक्त आहार दिया जाय तथा साथ ही साथ पानी के बर्तन बढ़ा दिये जायें। इससे अण्डा उत्पादन को कम होने से रोका जा सकता है।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रति रूपये 25/—मात्र

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या — 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल—सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

मुद्रित

सेवा में,
श्री / श्रीमती

प्रेषकः
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या — 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित